# धर्म, कर्म और विज्ञान

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय
पाण्डव भवन, आबू पर्वत (राज.)

# धर्म, कर्म और विज्ञान

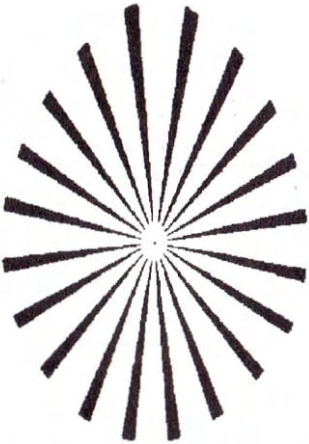

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय
पाण्डव भवन, आबू पर्वत (राज.)

परमपिता परमात्मा शिव ने प्रजापिता ब्रह्मा
द्वारा जो ज्ञान दिया, उसके आधार पर
लिखे गये निबन्ध इसमें संग्रहीत हैं।

**लेखक :** *ब्रह्माकुमार जगदीश चन्द्र*

**मुद्रक :** ओम् शान्ति प्रेस,
ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड (राज.)
**फोन नं० (०२९७४)- २८१२४, २५,२६**

**Copyright :** Brahma Kumaris Ishwariya Vishwa Vidyalaya, Mount Abu (Rajasthan)

No part of this book may be printed without the permission of the publisher.

# धर्म और विज्ञान

पिछले पचास या सौ वर्षों में विज्ञान का अभूतपूर्व विकास हुआ है। विज्ञान द्वारा अनेक आश्चर्यजनक आविष्कार मनुष्य के सामने आये हैं। विज्ञान ने जिन नवीन सिद्धान्तों की स्थापना की है उन द्वारा कई चिर-प्रचलित 'धार्मिक' मान्यताएं धराशायी हो गई हैं। चूँकि विज्ञान की पद्धति ऐसी है कि वह प्राय: प्रयोग (Practical) द्वारा अपने सिद्धान्त को प्रत्यक्ष रूप में प्रमाणित कर सकता है, इसलिए आज विज्ञान में लोगों की अधिक आस्था है और जहाँ भी वह किसी धार्मिक सिद्धान्त का विरोध करता है वहाँ प्राय: लोग विज्ञान ही में विश्वास करते हैं। परन्तु दूसरी ओर हम यह देखते हैं कि वैज्ञानिक साधनों से सुख-सामग्री पाकर भी बहुत-से मनुष्य चैन की नींद नहीं सो सकते। इसके अतिरिक्त, कई उच्चकोटि के वैज्ञानिकों ने स्वयं भी धर्म की आवश्यकता को स्वीकार किया है।

इस प्रकार आज धर्म और विज्ञान के बारे में लोगों का कोई एक निश्चित मन्तव्य नहीं है परन्तु इसमें संदेह नहीं कि दोनों का अपना-अपना महत्त्व है। इस पुस्तक में हमने धर्म और विज्ञान दोनों के अपने-अपने स्थान और कर्त्तव्य का परिचय देने का यत्न किया है। परमपिता परमात्मा शिव ने इन दोनों से सम्बन्धित वर्तमान में जो महावाक्य उच्चारण किये, उनके आधार पर प्रकाशित किये गये लेखों को, इस पुस्तक के रूप में संग्रहीत किया गया है। आशा है कि पुस्तक द्वारा पाठकों को इस विषय पर प्रकाश मिलेगा।

**– ब्र.कु. जगदीश चन्द्र**

# अमृत-सूची


| क्रम | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| १. | धर्म और विज्ञान | ३ |
| २. | धर्म और कर्म | ५ |
| ३. | धर्म और विज्ञान | १५ |
| ४. | परमाणु शक्ति बनाम परमात्मिक शक्ति | २३ |
| ५. | औद्योगिक और राजनीतिक क्रान्ति और शान्ति | २६ |
| ६. | योग, विज्ञान और मनोविज्ञान | ३१ |
| ७. | धर्म और विज्ञान *(भाग दो)* | ३७ |
| ८. | धर्म और अध्यात्म का स्वरूप और सम-भावना | ४३ |
| ९. | संसार उन्नति की ओर जा रहा है या अवनति और विज्ञान की ओर | ५२ |
| १०. | मनुष्य चन्द्रमा तक कैसे पहुँचा? चाँद के बारे में विचित्र मान्यताएं | ५९ |
| ११. | क्या विज्ञान – ईश्वरीय ज्ञान का समर्थक और सहायक है या विरोधी और बाधक? | ६७ |
| १२. | परमात्मा क्या देता है और विज्ञान क्या देता है? | ७४ |
| १३. | धर्म और विज्ञान के बीच विषमता कैसे दूर हो? | ८१ |
| १४. | समन्वय | ८६ |

# धर्म और कर्म

'मनुष्य के लिए धर्म की आवश्यकता है या नहीं; 'क्या धर्म का कर्म के साथ कोई सम्बन्ध है' तथा 'मनुष्य के कर्म कैसे होने चाहिए?' इन तीन प्रश्नों पर संसार में मुद्दत से बहुत ही मतभेद चला आ रहा है।

वर्तमान समय संसार का एक बहुत बड़ा भाग साम्यवाद के घेरे में है। साम्यवाद के आदि-वक्ता, कार्ल मार्क्स, जिन्होंने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या की, का कथन है कि धर्म एक प्रकार की अफ़ीम है जिसके परिणामस्वरूप धर्मवादियों में अकर्मण्यता तथा भाग्यवादिता देखने में आती है। इसके विपरीत, आधुनिक काल के अति विख्यात इतिहासकार अर्नोल्ड टायनबी (Arnold Toynbee), जिन्होंने इतिहास पर कई ग्रन्थ लिखे हैं, का कहना है कि धर्म ही संसार के इतिहास की धुरी रहा है। और, गीता के भगवान ने तो धर्म को यहाँ तक महत्व दिया है कि उनका वचन है कि धर्म की पुनर्स्थापना के लिए तो वे परमधाम को छोड़कर स्वयं धरती पर आते हैं। अत: अवश्य ही धर्म के लक्षण अथवा स्वरूप के बारे में कुछ विषमता है। अत: पहले यह समझना ज़रूरी है कि 'धर्म' क्या है?

### धर्म और उसके अंग

**नैतिक एवं चारित्रिक मूल्य**

संसार में जितने भी धर्म हैं, उनका एक मुख्य उद्देश्य मनुष्य के चरित्र का उत्थान है। अत: धर्म का एक मुख्य अंग — आचार-संहिता है। 'धर्म' शब्द का अर्थ **'धारणा'** है; धर्म हमें जीवन के लिए कुछ उच्च धारणायें देता है। उन धारणाओं के फलस्वरूप मनुष्य का जीवन पतित नहीं होता है। धर्म हमें बुराइयों से बचकर रहने की शिक्षा देता है। अत: धर्म-ज्ञान का एक बहुत बड़ा भाग नैतिक शिक्षा, चारित्रिक शिक्षा

अथवा विधि-निषेध (Do's and Dont's) है। अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अक्रोध इत्यादि इसी के अन्तर्गत हैं।

हरेक धर्म में इनका उल्लेख है। परन्तु, एक धर्म और दूसरे धर्म में इनकी कलाओं (Degrees) का अन्तर है। उदाहरण के तौर पर कोई धर्म हरेक परिस्थिति में, पूर्ण-रूपेण अहिंसा का पालन सिखाता है, अन्य कोई केवल अनावश्यक हिंसा से बचे रहने को 'अहिंसा' मानता है। एक धर्म अधिकाधिक हिंसा से बचे रहने को 'अहिंसा' मानता है। एक धर्म अधिकाधिक तीन-चार विवाह कर लेने की स्वीकृति देता है, परन्तु पर-स्त्री-गमन अथवा व्यभिचार के लिए निषेध करता है; उसके लिए वही ब्रह्मचर्य है; अन्य धर्म २५ वर्ष तक अविवाहित जीवन में कौमार्य व्रत के पालन को ब्रह्मचर्य मानता है। तीसरा, गृहस्थ में एक नारी के नियम को भी ब्रह्मचर्य बता रहा है* और चौथा ब्रह्म में बुद्धि को स्थिर रखते हुए अपनी चर्या चलाने पर ज़ोर देता है; वह इस नैष्ठिक स्थिति द्वारा अक्षुण्ण ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए कहता है। उसकी मान्यता है कि पच्चीस-पच्चीस वर्ष के एक आश्रम की जो सीमा बाँधी गई है, वह तो उन लोगों के लिए है जो आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं करना चाहते अथवा नहीं कर सकते, वरना जो ३० वर्ष तक, ३६ वर्ष तक और उससे भी बढ़कर जो ४० वर्ष तक, और सबसे बढ़कर जो जीवन-पर्यन्त ब्रह्मचर्य का पालन करता है, वह उत्तरोत्तर एक-दूसरे से अधिक महान है। उनकी मान्यता है कि मुक्ति के अभिलाषी को तो जीवन-पर्यन्त ब्रह्मचर्य का पालन करना ही चाहिए क्योंकि इस द्वारा ही ओज-लाभ होता है, सूक्ष्म आध्यात्मिक तथ्य बुद्धि की पकड़ में आते हैं, आत्म चेतस-भाव (Soul-Consciousness)

* *एक नारी सदा ब्रह्मचारी – यह आज आम लोगों की मान्यता है।*

परिपक्क्व होता है तथा आत्मिक विकास की सुदृढ़ नींव तैयार होती है। यही बात आचार-सम्बन्धी दूसरे नियमों तथा मूल्यों के बारे में कही जा सकती है।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय आचार-सम्बन्धी इन नियमों का अथवा नैतिक मूल्यों का १६ कला विकास करने, दानवता को छोड़कर और मानवता से उठकर देवत्व को प्राप्त करने की शिक्षा देता है। वह व्यक्ति और समाज, दोनों को इनके पालन के लिए प्रेरणा तथा मार्ग-प्रदर्शना देता है।

(२) प्राय: सभी धर्मों का आरम्भ कुछ दार्शनिक प्रश्नों को लेकर हुआ है। ये दार्शनिक प्रश्न जगत्, कर्म, जगत-कर्त्ता इत्यादि से सम्बन्धित हैं। शरीर ही सब-कुछ है या इसकी अग्नि-क्रिया के बाद कुछ बचा रहता है? 'यह सोचने-समझने तथा करने वाली शक्ति भौतिक है या वह कुछ और है?', 'यह संसार जो दिखाई दे रहा है, यह अपने वास्तविक स्वरूप में क्या है? क्या इसका कोई रचयिता या निर्माता है? दु:ख का कारण क्या है और उससे मुक्ति प्राप्त करने पर आत्मा की क्या अवस्था होती है और परमात्मा के साथ उसका क्या सम्बन्ध होता है?' इन तथा ऐसे अन्य प्रश्नों का समाधान धर्म-ज्ञान देने का यत्न करता है। धर्म का यह पक्ष दार्शनिक पक्ष है।

**दार्शनिक सिद्धान्त अथवा आध्यात्मिक मान्यताएँ**

दार्शनिक सिद्धान्तों की दृष्टि से देखा जाय तो एक धर्म और दूसरे धर्म में बहुत अन्तर है। ये दार्शनिक मान्यतायें ही 'मत' कहलाते हैं और इनको लेकर धर्म के नाम पर खून भी बहा और धर्म ने कई लोगों को शान्ति भी दी है। वास्तव में इन धार्मिक सिद्धान्तों का अभिप्राय मनुष्य को सत्य का बोध कराना तथा परम सत्ता को पाना था। परन्तु,

इन्हीं को लेकर अनुयायियों ने वाद-विवाद तथा वैमनस्य को जन्म दे दिया। इन सैद्धान्तिक तथ्यों ने आचरण की नींव बनने का काम करना था परन्तु बाद के लोग इस नींव को भी अनाचार के धरातल पर बनाने लगे।

एक बात जिससे प्राय: सभी धर्मों के लोग सहमत हैं, यह है कि अभौतिक, आध्यात्मिक अथवा गूढ़ रहस्यों का भेदन मनुष्य अपनी बुद्धि से नहीं कर सकता। अत: हरेक धर्म-स्थापक ने या तो यह कहा है कि ये सैद्धान्तिक तथ्य उसे परमात्मा से उपलब्ध हुए हैं या मत-प्रवर्तकों के अनुयायियों ने उन मत-स्थापकों को ही 'भगवान' मान लिया। इसके फलस्वरूप भी संसार में द्वन्द्व फैला और ईश्वर-वादी लोगों में ईश्वर के बारे में मतैक्य न देख लोग नास्तिक बनने लगे तथा उन्होंने धर्म को अन्ध-विश्वास मान लिया।

(३) धर्म का एक मुख्य अंग साधना, उपासना या पुरुषार्थ है। सम्पूर्ण आध्यात्मिक विकास के लिए या प्रभु-मिलन के लिए या मुक्ति-प्राप्ति के लिए मनुष्य को क्या करना चाहिए? इस पर भी धर्म प्रकाश डालता है। किसी ने विष्णु देवता की भक्ति का उपदेश दिया तो अन्य ने, दुर्गा देवी का। किसी ने निराकार की उपासना का प्रचार किया तो अन्य किसी ने यज्ञ या जप को इसका साधन बताया है।

**साधना, उपासना, यज्ञ-योगादि**

सैद्धान्तिक मतभेद होने के कारण साधना में भी विभेद हो गये। साधना को छोड़कर अपने-अपने मत का प्रचार अधिक होने लगा। भाव तो यह था कि साधना करके साध्य की सिद्धि की जाय, उपासना द्वारा उपास्य देव के गुण अपने जीवन में लाये जायें अथवा पुरुषार्थ द्वारा प्रालब्ध उच्च बनाई जाय परन्तु कुछ करने की बजाय लोग लड़ने लगे। किसी-किसी ने इस लड़ाई को देख-कर यह

कहना शुरू कर दिया कि लड़ो मत, सभी मार्ग एक ही लक्ष्य की ओर जाते हैं। गोया लड़ाई मिटाने की शुभ भावना से उसने सत्य पर ही पर्दा डालने का काम किया। अन्य किसी ने इन सभी बातों को एक बखेड़ा, झंझट अथवा आडम्बर मान कर धर्म की चर्चा ही छोड़ दी। वास्तव में साधना से ही तो मनुष्य कुछ पाता है, किन्तु कई लोगों ने साधना को ऐसा लिया कि वे साधु और सन्यासी बन गये और उन्होंने कर्म छोड़ दिया तथा सेवा लेने लगे। अन्य ने साधना को तिलांजलि ही दे दी।

(४) समयान्तर में हरेक धर्म के लोगों के कुछ अपने रीति-रिवाज, विधि-विधान या क्रियायें और कलाप प्रचलित हो गये। धीरे-धीरे इन्होंने कर्म-काण्ड (Rituals) का रूप धारण कर लिया। शुरू में इनके पीछे भी अभिप्राय तो शायद यह था कि व्यक्तिगत तथा सामाजिक कर्म करते समय मनुष्य के मन में प्रभु की स्मृति रहे और धर्म की भावना रहे, परन्तु यह विधि-विधान सूक्ष्मता को छोड़कर स्थूल हो गये और जटिल बन गये तथा धर्म में इनकी प्रधानता हो गई तथा सर्व-सामान्य ने धर्म के अन्य अंगों को छोड़कर केवल इन्हें ही करना शुरू कर दिया। करना ही शुरू नहीं किया बल्कि वे पण्डों, याज्ञिकों, पुजारियों इत्यादि को पैसे देकर अपने नाम से यज्ञ, पूजा, अनुष्ठान, माला-जप इत्यादि कराने लगे।

**रीति-रिवाज और कर्म-काण्ड**

**धर्म और कर्म के बारे में कुछेक मुख्य विचार**

ऊपर, धर्म का जो थोड़ा-सा परिचय कराया गया, अब उसकी पृष्ठ-भूमिका में यह समझना सहज होगा कि धर्म और कर्म के बारे में हरेक ने अलग-अलग मत क्यों व्यक्त किये।

कुछ लोगों ने धर्म में कर्म-काण्ड का बाहुल्य देखकर, धर्म को

एक आडम्बर अथवा पण्डों की कमाई का साधन मान लिया और उन्होंने धर्म से ही मुख मोड़ लिया। उन्होंने यह नहीं सोचा कि यह तो खेतों में पौधों के साथ उपजे जंगली घास-पात (Weeds) हैं, जिन्हें हमें छोड़ देना चाहिए परन्तु घास-पात को देखकर पौधों को नहीं छोड़ना चाहिए।

### धर्म को कर्म मानने वाले लोग

इनके प्रतिपक्षी वे लोग हैं जो धर्म को कर्म मान कर कर्म-काण्डों में ही रात-दिन लगे हुए हैं। वे धर्म के सूक्ष्म तत्त्वों को तथा आचार के नियमों को जीवन में धारण नहीं करते, दिनों-दिन उनके जीवन में अक्रोध, अहिंसा, जितेन्द्रियता इत्यादि की कलाएं भी नहीं बढ़ रहीं; उनके जीवन में रूहानियत अथवा आध्यात्मिक श्रेष्ठता भी देखने को नहीं मिलती, केवल मन्त्रोच्चारण, पाठ-पूजा, यज्ञ-यात्रा में ही वे लोग लगे रहते हैं और हठ-क्रियाएँ भी कर रहे हैं। स्पष्ट है कि ऐसा करना तो ग़लत है। यदि मुंडन संस्कार, यज्ञोपवीत (उपनयन) संस्कार इत्यादि संस्कार तथा हर आये दिन पण्डित जी को बुलाकर कर्म करना ही धर्म है तब तो धर्म खर्चीले रस्म-रिवाज ही का नाम हुआ — ये कोई सत्य के साक्षात्कार परम सत्ता की अनुभूति तथा चरित्र को उज्वल करने वाली चीज़ तो रही नहीं। इस ग़लत दृष्टिकोण से तो धर्म बदनाम हुआ है।

### कर्म को धर्म मानने वाले लोग

दूसरी प्रकार के लोग वे हैं जो कर्म को धर्म मान बैठे हैं। वे धर्मों में सैद्धान्तिक मत-भेदों को तथा कर्म-काण्डों के बाहुल्य को देखकर धर्म से चिड़े हुए हैं। अत: वे कहते हैं कि धर्म कोई दूसरी चीज़ नहीं है; कर्म करना ही धर्म है। मनुष्य को अपने कर्म करते जाना चाहिए; ईमानदारी से कर्म करना ही धर्म है। उनका कथन है कि यदि कोई

गृहस्थी है तो बाल-बच्चों का पालन तथा दफ्तर या कारखाने में ठीक रीति से काम करना ही उसका धर्म है। इसके अतिरिक्त, वे योगादि साधनों को नहीं मानते तथा सैद्धान्तिक ज्ञान को भी सुनना आवश्यक नहीं समझते। स्पष्ट है कि यह दृष्टिकोण भी ठीक नहीं है क्योंकि कर्म करते हुए मनुष्य के सामने कोई मर्यादा, कोई आचार-संहिता या कोई नैतिक मूल्य तो रहना ही चाहिए। ईमानदारी अथवा कर्त्तव्य-पालन तो एक दिव्य गुण है, धर्म तो ऐसे अन्य बहुत से गुण सिखाता है।

पुनश्च, मनुष्य-जीवन का लक्ष्य क्या है, अन्य जो मानव हैं, उनके साथ हमारा सम्बन्ध क्या है, जो कर्म करते हैं, क्या उनका फल अगले जन्म में भी मिलता है या देह समाप्त होने पर सभी कर्म भी साथ ही समाप्त हो जाते हैं? क्या देह, धन और घर ही सब-कुछ है या ये केवल कर्म करने तथा भोगने का साधन हैं और हम अपनी सत्ता में इनसे भिन्न अभौतिक एवं शाश्वत हैं? - जब तक मनुष्य की बुद्धि में ये तथा अन्य इस प्रकार के सत्य स्पष्ट न हों तब तक कर्म, व्यवहार अथवा व्यापार के प्रति उसके सही दृष्टिकोण (Right Attitudes) कैसे निर्धारित होंगे और सत्य को जानने का मनुष्य का जो सहज स्वभाव है, उसका कैसे समाधान होगा?

फिर, कर्म तो ज्ञान तथा इच्छा पर आधारित है। धर्म-ज्ञान ही मनुष्य की इच्छा को परिमार्जित एवं मर्यादित करता है और उसका विपरीत भाव उसे उच्छृंखल, निरंकुश तथा स्वार्थपरक बनाता है। भौतिकवादी दृष्टिकोण को अपनाने वाले पाश्चात्य देशों में धर्म-ज्ञान के बिना जो असन्तोष, अशान्ति तथा अमर्यादा (Permissiveness) फैली है, वह प्रत्यक्ष ही है।

### धर्म और कर्म को अलग-अलग मानने वाले लोग

तीसरी प्रकार के लोग वे हैं जो कहते हैं कि धर्म तो हरेक की

निजी चीज है, उसके लिए हरेक को स्वतन्त्रता भी है, परन्तु राष्ट्र अथवा समाज के मामलों में धर्म का कोई दखल नहीं होना चाहिए। प्रात: उठकर जिसकी जैसी भावना हो वह पूजा, पाठ निमाज या ग्रन्थ साहिब पढ़े, परन्तु जब देश या समाज के मामलों की चर्चा हो तो मनुष्य को धर्म निरपेक्ष (Secular) हो जाना चाहिए। देश में अनेक धर्म (मत) होने के परिणामस्वरूप ही कई लोगों का ऐसा दृष्टिकोण बना, परन्तु हम देखते हैं कि शिक्षा-संस्थाओं में धर्म-शिक्षा का बहिष्कार हो जाने से विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता किस सीमा तक पहुँच चुकी है। असहिष्णुता, हिंसा, घृणा इत्यादि का बहिष्कार करने की बजाय धर्म का बहिष्कार कर देने का ही तो यह परिणाम है कि आज जहाँ-तहाँ रिश्वत, चोर बाज़ारी, मुनाफ़ाखोरी तथा अन्य प्रकार के भ्रष्टाचार पनप रहे हैं।

फिर, इस बात को तो भुला ही दिया गया कि धर्म केवल व्यक्ति की शान्ति या ईश्वरानुभूति के लिए नहीं है बल्कि समाज को गठित, पवित्र तथा प्रेम-सम्पन्न बनाने के लिए भी है और व्यक्ति के लिए कुछ नियम निर्धारित करके धर्म, समाज की समस्याओं को मूल में समाप्त कर देता है। यदि यह बात समझ और मान ली जाय, तब कोई कैसे कह सकता है कि राष्ट्रीय तथा सामाजिक मामलों में धर्म-निरपेक्षता ही की नीति होनी चाहिए। जहाँ तक आचार या नैतिकता की बात है, हमें सर्वोत्कृष्ट अर्थात् दैवी आचार बताने वाले धर्म की शिक्षा स्कूलों में देनी चाहिए क्योंकि लक्ष्य तो ऊँचा ही होना चाहिए। जहाँ तक दार्शनिक सिद्धान्तों की बात है, उसे यों जाँचा जा सकता है कि सब से अधिक किस धर्म के सिद्धान्त तर्क को भी सन्तुष्ट करते हैं तथा आचार को भी उज्वल बनाते हैं और साधना को भी सहज, स्वाभाविक तथा मनोविज्ञान-सम्मत बनाते हैं। जहाँ तक खर्चीले कर्म-काण्डों की

बात है, वह हम व्यक्ति के लिए छोड़ सकते हैं। परन्तु धर्म को ही छोड़ देना अथवा उसके प्रति निरपेक्ष भाव धारण करना तो घातक ही सिद्ध हुआ है।

### व्यापार और व्यवहार को धर्म से अलग मानने वाले लोग

चौथी प्रकार के लोग वे हैं जो कि निजी-कार्य-व्यवहार में भी धर्म को कर्म से अलग करते हैं। वे प्रात: पूजा-पाठ करते हैं परन्तु जब दुकान पर बैठते हैं, तो धर्म को घर ही छोड़ आये होते हैं। जब उस दुकानदार को कोई ग्राहक कहता है कि आप तो एक धर्म-प्रिय मनुष्य हैं, अत: आप चोर-बाज़ारी न करें तो वह दुकानदार कहता है-"भाई साहेब, धर्म की बात घर पर; अब तो व्यापार की बात करो।" इस प्रकार, गीता पढ़ते समय लोग ऊँचे स्वर से अलाप करते हैं-" हे अर्जुन, काम, क्रोध, लोभ नरक के द्वार हैं," परन्तु पाठ से उठते ही वे बच्चों से क्रोध करने लगते हैं, रात्रि को काम रूप नरक के द्वार से भी गुज़रते हैं और दिन-भर दुकान पर या दफ्तर में ब्लैक या रिश्वत करके लोभ भी खूब करते हैं! इस तरह आज गृहस्थ अलग और आश्रम अलग हो गये हैं, धर्म अलग और कर्म अलग हो गया है। मन्दिरों में लोग माथा टेकते हैं परन्तु घर को वह मन्दिर न बना कर वहाँ पाप करने की छूट समझते हैं। स्पष्ट है कि यह दृष्टिकोण भी ग़लत है। धर्म का उद्‌गम तो इसी उद्देश्य से हुआ कि मनुष्य पतित होने से बचे और यदि यह आवश्यकता पूरी न हो तो वह धर्म ही कैसा है?

लेख का कलेवर बढ़ गया है। अत: इसका उपसंहार करते हुए संक्षेप में यही कहना पर्याप्त रहेगा कि धर्म का कर्म के साथ गहरा सम्बन्ध है। वास्तव में धर्म का एक मुख्य उद्देश्य हमारे कर्म को

सुधारना है, चाहे वह कर्म कौटुम्बिक हो, या आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक। इसके अतिरिक्त, धर्म का लक्ष्य मनुष्य के संस्कार तथा व्यवहार को सुधारते हुए, उसे समाज के लिये एक उपयोगी नागरिक बनाना, तथा उसका आध्यात्मिक विकास करके, उसे देवत्व के दर्जे पर लाना है।

पुनश्च, प्रसिद्ध विकासवाद (Evolution theory) के जन्म-दाता ने तो मानव को 'योग्यतम की सुरक्षा' (Survival of the fittest) का सिद्धान्त देकर मनुष्यों में द्वन्द्व बढ़ाया है और प्रसिद्ध साम्यवाद के पिता कार्ल मार्क्स ने मनुष्य को-मनुष्य का संगी (Comrade) ही बनाया है, परन्तु धर्म मनुष्यों को शान्ति और प्रेम के सागर तथा दयालु परमात्मा पिता से नाता जोड़ कर उनमें भ्रातृत्व की भावना (Brotherhood) पैदा करता है और उन्हें शान्ति, स्नेह तथा दयालु बनने की शिक्षा देता है। हाँ, धर्म का स्वरूप ही यदि विकृत हो जाय तो यह बात अलग है।

अत: आज परमपिता परमात्मा अथवा गीता के भगवान पुन: जो ज्ञान (दर्शन-पक्ष) योग (साधना-पक्ष) दिव्य गुणों की धारणा तथा पवित्रता (आचार पक्ष अथवा जीवन दर्शन) की तथा कर्म करते हुए भी पवित्र रहने तथा दिव्य मर्यादा का पालन करने की जो शिक्षा दे रहे हैं, उसे समझकर हमें धर्म द्वारा कर्म को श्रेष्ठ और विकर्म को दग्ध करना चाहिए और उन द्वारा सिखाये योग द्वारा ईश्वरीय आनन्द को प्राप्त करना चाहिए। अब धर्म की विकृति देख कर दैवी धर्म की पुनर्स्थापना करने भगवान स्वयं आये हैं; हमें अब धर्म से पूरा लाभ लेना चाहिए।

# धर्म और विज्ञान

एक समय था जब संसार का झुकाव धर्म की ओर था। मनुष्य सृष्टि और उसके रचयिता के बारे में धर्म-पुरुषों के द्वारा जानना चाहता था। वह जीवन और मृत्यु, कर्म और फल, आत्मा और परमात्मा, लोक और परलोक के रहस्यों को जानने की तीव्र जिज्ञासा करता था। परन्तु आज हम देखते हैं कि मनुष्य विज्ञान के चमत्कारों से अधिक प्रभावित है और विज्ञान की अधिक महत्ता मानता है। अत: धार्मिक लोगों के लिए यह सोचने का विषय है कि ऐसा क्यों हुआ और कि मनुष्य के निजी जीवन तथा सामाजिक जीवन में धर्म को विज्ञान से गौण स्थान मिलने का आज क्या परिणाम हुआ है और वास्तव में दोनों का क्या स्थान होना चाहिए? हमें देखना यह भी है कि हमारी दृष्टि में धर्म का विज्ञान से क्या सम्बन्ध है? परन्तु इस सारी चर्चा से पहले सरल शब्दों में विज्ञान और धर्म की एक साधारण-सी परिभाषा कर लेना ज़रूरी है।

### विज्ञान क्या है और धर्म क्या है?

वास्तव में 'विज्ञान' प्रकृति (Matter) और उसकी शक्तियों (Energy or Forces) के पीछे हुए नियमों के अध्ययन का नाम है। प्रकृति में जो रूपान्तर, प्रकारान्तर या परिवर्तन होते हैं और उनके जो गुण (Properties), प्रभाव (Effects) या प्रयोग (Uses) आदि हैं या प्रकृति के जगत् में जो क्रिया-प्रतिक्रिया (Action and Reaction) होती है, उनको विधिपूर्वक जानने और उनके परीक्षण तथा प्रयोग करने का नाम 'विज्ञान' है।

'धर्म' का क्षेत्र इससे भिन्न है। धर्म मनुष्य के लिए कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य को निर्धारित करता है, उसे चारित्रिक और नैतिक मूल्य प्रदान

करता है, उसके आचरण के लिए एक मर्यादा या आचार-संहिता (Code of Conduct) देता है और उसे प्रकृति से भिन्न एक अविनाशी-चेतन का, अर्थात् 'आत्मा' का बोध कराता है तथा उस चेतन ही की स्मृति में स्थित होने पर अधिक बल देता है। 'धर्म' शब्द का अर्थ 'धारणा' है; अत: धर्म मनुष्य को जीवन में कुछ अच्छे नियम, अच्छे गुण या अच्छे विचार एवं दृष्टिकोण अपनाने को कहता है। वह मनुष्य को बुराई करने से रोकता है और बुराई से बचने की युक्तियाँ भी देता है।

धर्म और विज्ञान दोनों का लक्ष्य तो मनुष्य के सुख की वृद्धि करना है। हाँ, कई धर्म सुख की भेंट में शान्ति को अधिक महत्ता देते हैं और कई तो सुख को काक-विष्ठा के समान बता कर उसका संन्यास करने के लिए भी कहते हैं। धर्म और विज्ञान के लक्ष्य में एक अन्तर यह भी है कि वैज्ञानिक तो वर्तमान लौकिक जीवन को अधिक सुखी और सुविधा-सम्पन्न बनाने का यत्न करता है जबकि धर्म इहलौकिक जीवन के अतिरिक्त, बाद के जीवन के सुख को भी बहुत महत्त्व देता है।

वैज्ञानिक अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए अनुसन्धान (Research) अथवा निरीक्षण (Observation) और परीक्षण (Experimentation) की विधि को अपनाता है परन्तु धार्मिक लोग ईश्वर द्वारा रहस्योद्घाटन (Revelation; इल्हाम) को या आप्त वचनों को (Versions of High souls), दिव्य साक्षात्कारों (Divine Visions) को तथा अलौकिक अनुभवों (Spiritual, Superphysical or mystical experiences) को अधिक महत्व देते हैं क्योंकि उनके अध्ययन का विषय भी अलौकिक और अतीन्द्रिय (Extra-sensory) है।

## लोगों का झुकाव धर्म से हट कर विज्ञान की ओर अधिक क्यों?

हर-एक धर्म जब स्थापित हुआ तो उसके स्थापक ने मनुष्य को बुराई से बचने और अच्छाई को अपनाने का उपदेश देकर मनुष्य को कुछ उच्च चरित्र दिया और परिणामत: मनुष्य को कुछ शान्ति का लाभ हुआ। नियमों को अपनाने के फलस्वरूप मनुष्य को कुछ अतीन्द्रिय (Extra-sensory) अनुभव भी होते रहे जिससे कि धर्म में उसका विश्वास बना रहा। परन्तु धीरे-धीरे मनुष्य धर्म से हटता गया। उसके कई कारण हैं जिनमें से कुछेक का हम उल्लेख करेंगे –

### (१) सिद्धान्तों में त्रुटि, अपूर्णता अथवा अस्पष्टता

हरेक धर्म ने समाज को आत्मा, परमात्मा, सृष्टि और कर्म-सम्बन्धी जो 'ज्ञान' या मत दिया, उसमें कुछ अंश ऐसे थे जो कि बाद में वैज्ञानिक अनुसंधानों से प्राप्त ज्ञान के सामने असत्य जान पड़े। उदाहरण के तौर पर किसी धर्म के धर्म-ग्रंथ में यदि पृथ्वी को चपटा माना गया था तो बाद में वैज्ञानिकों ने उसे गोल सिद्ध किया। किसी धर्म की धर्म-पुस्तकों में जड़ और चेतन को एक ही तत्व के दो रूप सिद्ध करने के लिए यदि ये दृष्टान्त दिये गये थे कि 'जैसे जड़ गोबर से चेतन बिच्छु पैदा हो जाते हैं या जैसे चेतन मकड़ी अपने में से जड़ जाला निकालती है'' वैसे ही सभी जड़-चेतन एक ही तत्व या ब्रह्म के रूप हैं तो वैज्ञानिकों ने अणुवीक्षण द्वारा यह सिद्ध करके बता दिया कि गोबर में कीटाणु तो पहले ही से होते हैं और कि मकड़ी जाला तो अपने शरीर ही से निकालती है।

दूसरे ऐसा भी हुआ कि कई धर्मों में परमात्मा को सर्वव्यापक बताया गया था; वैज्ञानिकों ने सोचा कि यदि परमात्मा सर्वव्यापक है

तो जैसे लोहे में व्यापक होने पर अग्नि के गुण भी लोहे में व्यापक होते हैं, जैसे दूध में मिलने पर चीनी के मिठास आदि गुण भी दूध में होते हैं, वैसे परमात्मा के आनन्द, शान्ति, प्रेम आदि गुण संसार में व्यापक क्यों नहीं? किसी धर्म में यदि यह कहा गया था कि संसार में जो कुछ भी हो रहा है सब परमात्मा ही कर रहा है तो बुद्धि-जीवी लोगों ने सोचा कि यदि परमात्मा ही सब-कुछ कर रहा है तो संसार में अनाचार तथा पापाचार क्यों है? इसी प्रकार, किसी धर्म में यह माना गया था कि परमात्मा ही सभी के शरीरों को रचता है, वर्षा करता है और भूकम्प आदि लाता है परन्तु वैज्ञानिकों ने देखा कि शरीर की रचना तो जीवाणु करते हैं, वर्षा तो सूर्य-ताप के प्रभाव से मेघ बनने के फलस्वरूप होती है और भूचाल तो पृथ्वी के नीचे भौगोलिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप होते हैं। इस प्रकार, जब वैज्ञानिक लोग अपने मन्तव्यों को प्रत्यक्ष प्रमाणों द्वारा सिद्ध करने लगे या बुद्धिजीवी लोग धर्म पर विचार करने लगे तो प्रचलित धर्मों में लोगों के निश्चय में कमी होने लगी और पहले लोगों में जो दृढ़ विश्वास था या अपने धर्म को ईश्वर द्वारा स्थापित हुआ मानने के कारण उसके प्रति जो भावना थी, वह कम हुई।

### (२) धर्मों में अनेक प्रकार की रस्में, हठ और जड़-पूजा आदि

इसके अतिरिक्त, कई धर्मों में अनेक प्रकार के जो वहम, रस्में (Rituals) कर्म-काण्ड, वृक्षों, सूर्य आदि की पूजा, घर-बार का संन्यास करने तथा स्वयं को अनेक प्रकार की यातनाओं या हठ-क्रियाओं (Penances and ordeals) द्वारा कष्ट देने वाली साधनाएं आदि थीं उनके कारण भी लोग धर्म से विमुख हो गये। उन्होंने जब यह देखा कि विज्ञान तो इसी जीवन में सहज ही सुख देता है और

धर्माचार्य इस जीवन में अनेक कष्ट-साध्य साधनाएं बताते हैं और अगले जीवन के सुख की आशा दिलाते हैं तो धर्म में उनका उत्साह कम हो गया।

### (३) धर्म-वादियों में मत-विरोध और जनून

इस प्रकार संसार में अनेक धर्म स्थापित हुए और धर्मवादियों में मत-भेद बढ़ता गया। एक ही परमात्मा के बारे में अनेक मत हो गये और सभी अपने-अपने मत को सर्वश्रेष्ठ मानने लगे और कट्टर पंथी बन गये। परिणामस्वरूप धर्म के नाम पर आक्रमण भी हुए और लड़ाई-झगड़े भी। धर्म, जो शान्ति देने वाली एक चीज थी, अब अशान्ति का एक कारण बन गयी। उधर दूसरी ओर वैज्ञानिक अपनी मान्यता का प्रत्यक्ष परीक्षण दिखा कर दूसरों को भी एकमत कर लेते, इधर धर्मवादी लोगों में मत-विरोध बढ़ता गया और वे अपने सभी सिद्धान्तों को वैज्ञानिक रीति से सिद्ध न कर पाते थे।

### (४) धर्म-वादियों में उच्च धारणा नहीं रही

परन्तु धर्म से विमुख होने का सबसे बड़ा एक यह भी कारण था कि जो धर्माचार्य थे अथवा पण्डित, पण्डे या विद्वान माने जाते थे, उनका अपना नैतिक या आध्यात्मिक जीवन उच्च कोटि का या प्रेरणाप्रद न रहा था। 'धर्म' का तो अर्थ ही 'धारणा' है, अत:जब धर्म के नेताओं में भी उच्च धारणा न रही तब धर्म की बहुत बड़ी हानि हुई और लोग भौतिकवाद तथा विज्ञान के चमत्कारों के पीछे लग गये, उन्होंने चारित्रिक मूल्यों को केवल एक अप्राप्य आदर्श मानना शुरू किया। अत: अब विज्ञान की उन्नति में ही मनुष्य ने अपना तन, मन, धन और जीवन लगा दिया और धर्म को उसने कुछ विशेष लोगों जैसे कि पुजारियों या पादरियों के लिए ही छोड़ दिया।

## वर्तमान समय धर्म का जीवन में स्थान

ऊपर दिए वृत्तान्तों का फल यह हुआ कि आज संसार विज्ञान की अधिक महत्ता मानता है। विज्ञान ने मनुष्य के स्वास्थ्य, सफाई, सुविधा और सुख के लिए जो सामग्री दी है, उससे मनुष्य बहुत प्रभावित हैं और आज राष्ट्र तथा व्यक्ति विज्ञान की ओर अधिक ध्यान दे रहे हैं। आज चारित्रिक मूल्य, नैतिक परम्पराएं या धार्मिक मर्यादाएं अपना महत्व खो चुकी हैं और मनुष्य उच्छृंखल होकर अनुसंधान में लगा हुआ है। इसका परिणाम यह हुआ है कि जो विज्ञान मनुष्य की सुख-सामग्री के लक्ष्य को लेकर चला था, आज उसने मनुष्य के नाश के लिए भी पर्याप्त सामग्री तैयार कर ली है। अत: आज धर्म के अंकुश से रहित विज्ञान मनुष्य और राष्ट्रों के लिए एक खतरे का भी कारण बन गया है। आज विज्ञान के द्वारा मनुष्य संसार के भौतिक साधनों को तो इकट्ठा कर रहा है अथवा सुविधा की सामग्री को तो पा रहा है परन्तु वह अपने-आप को खो रहा है।

## धर्म और विज्ञान का जीवन में क्या स्थान होना चाहिए?

आज विज्ञान ने भले ही अपूर्व सफलता प्राप्त की है, यहां तक कि मनुष्य वृहस्पति तक भी जाने के स्वप्न देख रहे हैं परन्तु मनुष्य को मन की सच्ची शान्ति प्राप्त नहीं। फिर निरंकुश विज्ञान ने मनुष्य को जो आणविक अस्त्र, उद्जन बम आदि विनाशकारी सामग्री दी है, उसका परिणाम भी हमारे सामने है। मनुष्य का घर प्लास्टिक की रंग-विरंगी चीजों से, ट्रांजिस्टर, टी.वी., टेलीफोन, आदि-आदि साधनों से भरा होने पर भी उसकी आत्मा शान्ति से रिक्त है, उसका हृदय सच्चे सुख से शून्य है और उसका जीवन चारित्रिक दृष्टिकोण से बहुत ही पिछड़ा हुआ है। अत: विज्ञान द्वारा मनुष्य ने यदि संसार के तत्वों को जान भी

लिया तो क्या हुआ, स्वयं को तो वह न जान सका? यह तो चिराग़ तले अन्धेरे वाला मामला है। विज्ञान के अनुसंधान और आविष्कार करने वाली भी तो 'आत्मा' ही है। अत: मनुष्य को समझना चाहिए कि विज्ञान से भी अधिक महत्वपूर्ण वस्तु तो 'आत्मा' ही है। विज्ञान की जो उपलब्धियाँ हैं अथवा विज्ञान का जो उद्देश्य है (मानव को सुख-सामग्री देना) उसका भोग भी तो आत्मा ही करती है। अत: जिसके लिए ही विज्ञान रूपी सारा यत्न है और जो वस्तु विज्ञान के आविष्कार करती है उस अद्भुत एवं अनमोल वस्तु को न जानना मनुष्य की कितनी बड़ी भूल है! अतएव जीवन में मुख्य स्थान तो आत्मा के ज्ञान का और सहज योग (Meditation) रूपी विज्ञान का होना चाहिए वरना भौतिक विज्ञान को निरंकुश छोड़ने का परिणाम तो हम एक निरीह, लूट-खसूट वाली भौतिकवादी सभ्यता के रूप में देख ही रहे हैं।

### भविष्य में विज्ञान और धर्म का स्थान

अब हमें परमपिता परमात्मा शिव ने जो ईश्वरीय ज्ञान तथा विज्ञान (योग) की शिक्षा दी है उसके आधार पर हम जानते हैं कि जो सच्चा धर्म परमात्मा स्वयं प्रजापिता ब्रह्मा और सरस्वती अथवा एडम और ईव द्वारा स्थापित करते हैं वह स्वयं भी बहुत ऊंची कोटि का आध्यात्मिक विज्ञान होता है जो कि भौतिक विज्ञान द्वारा परिपुष्ट होता है, खण्डित नहीं होता। स्वयं परमात्मा द्वारा दिये हुए आत्मा और सृष्टि आदि से सम्बन्धित सिद्धान्त विज्ञान की दृष्टि से भी सत्य ठहरते हैं। अत: वास्तव में विज्ञान कोई सच्चे धर्म का विरोधी नहीं है बल्कि दोनों मिलकर मनुष्य के जीवन को सुखी बनाते हैं। सतयुगी और त्रेतायुगी सृष्टि में आज के विज्ञान का सार था परन्तु तब विज्ञान का इतना विस्तार न था। उन युगों में विज्ञान दु:खदायक न था क्योंकि मनुष्य की

बुद्धि सात्विक थी और उसके कर्म श्रेष्ठ थे। तब विज्ञान द्वारा प्राप्त साधनों-प्रसाधनों के प्रयोग से दुर्घटनाएं या विनाश न होता था जैसे कि आजकल होता है।

अब विज्ञान का जो विकास हो रहा है यह उसकी अन्तिम सीमा का सूचक है। यह विज्ञान निकट भविष्य में इस आचार-भ्रष्ट और धर्म-विमुख संसार के महाविनाश का कारण बनने वाला है। पिछले एक सौ वर्षो में विज्ञान ने जो तरक्की की है यह इसी अन्तिम भावी के कारण हुई है। इधर दूसरी ओर परमपिता परमात्मा शिव फिर से सतयुगी सम्पूर्ण सुखमय दैवी सृष्टि की स्थापना करने के लिए जो ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग सिखा रहे हैं, वह त्रुटियों से रहित एक सम्पूर्ण विज्ञान है जो कि भौतिक विज्ञान से अधिक शक्तिशाली है, वर्तमान जीवन में भी सुख-शान्ति को देने वाला है और बहुत ही युक्तियुक्त तथा विवेक-संगत है। वह जिस दिव्य, प्रत्यक्ष (साक्षात्कारों) तथा सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक अनुभवों तथा आत्मिक अनुभवों पर आधारित है, वह बहुत ही ऊंचे हैं। उनमें हमें यह भी मालूम हुआ है कि वर्तमान काल में विज्ञान का जो फैलाव हम देखते हैं, निकट भविष्य में होने वाले महाविनाश के बाद यह तो नहीं रहेगा परन्तु इसका शुद्ध एवं सात्विक सार रहेगा जो कि भविष्य में अमिश्रित एवं चिर-स्थायी सुख देने वाला रहेगा।

अत: सभी धर्म-प्रेमियों को हम यह आशाजनक सन्देश देना चाहते हैं कि अब सम्पूर्ण धर्म की स्थापना स्वयं परमात्मा द्वारा हो रही है, वह एक आहार-व्यवहार-आचार की संहिता हमें प्रदान करके हमारे जीवन को बहुत उच्च बना रहे हैं, हमें उससे लाभ उठा लेना चाहिए और अपने पावन तथा शान्त जीवन से संसार को धर्म का महत्व दर्शाना चाहिए।

# परमाणु शक्ति बनाम – परमात्मिक शक्ति

वर्तमान युग को कई लोग परमाणु युग (Atomic Era) का नाम देते हैं क्योंकि वे परमाणु शक्ति सम्बन्धी आविष्कार को वर्तमान काल की सबसे प्रमुख और महत्वपूर्ण घटना मानते हैं। इसमें सन्देह नहीं है कि परमाणु शक्ति का उपयोग यदि निर्माण के कार्य में किया जाय तो रेगिस्तान बदल कर हरे-भरे खेत बन सकते हैं, यातायात के लिए बहुत तीव्रगामी साधन उपलब्ध हो सकते हैं, बिजली इतनी सस्ती और इतनी अधिक पैदा की जा सकती है कि सारे संसार में रात्रि को भी दिन के रूप में बदला जा सकता है। इस प्रकार खेती, कारखानों, गाँवों, शहरों इत्यादि में ऐसी क्रान्ति लाई जा सकती है कि निर्धनता का नाम-निशान भी न रहे और यह संसार एक अजूबा-सा (Wonder-land) बन जाय। परन्तु आप देख रहे हैं कि परमाणु शक्ति का उपयोग रचनात्मक कार्यों (Constructive purposes) की बजाय अधिकतर विनाश-कारी कार्यों के लिए किया जा रहा है। विज्ञान बल (Science Power) द्वारा जो सामान बन रहा है वह या तो 'अल्पकाल' के लिए सुख देने में या विनाश ही की तैयारी में काम आ रहा है। उदाहरण के तौर पर आप जानते हैं कि आज तक असंख्य डालर और अनगिनत रुबल (रूसी मुद्रा) परमाणु बम बनाने के कार्य पर खर्च हो चुके होंगे।

साइंस पावर (Science power) अथवा परमाणु-शक्ति की सूक्ष्मता को अथवा उसके विस्तृत एवं क्रान्तिकारी प्रभाव को देखकर कोई भी व्यक्ति इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि परमाणु-शक्ति एक बहुत-भारी शक्ति है और एक कमाल की चीज़ है। परन्तु दूसरी ओर वर्तमान युग में इससे भी एक अधिक प्रबल शक्ति काम कर रही है, जिसे परमात्मिक-शक्ति अथवा साइलेन्स पावर (Silence Power)

कहना चाहिए। इस शक्ति द्वारा मनुष्य की काया-कल्प हो रही है और संसार में सचमुच क्रान्ति आ रही है। परमाणु शक्ति का आविष्कार तो पश्चिमी देशों में हुआ है परन्तु ज्ञान सूर्य परमपिता परमात्मा का अवतरण इधर पूर्व में भारत देश में हुआ है। परमाणु-शक्ति को जानने वाले वैज्ञानिक साइंस द्वारा ऐटामिक पावर के कार्यों में लगे हुए हैं। इधर भारत में परमपिता परमात्मा साइलेन्स पावर द्वारा मनुष्य की आत्मिक शक्ति बढ़ाने का अत्यन्त महान कर्त्तव्य कर रहे हैं।

परमपिता परमात्मा सहज ईश्वरीय ज्ञान और सहज राज-योग सिखाकर मनुष्यात्माओं के संस्कार को शुद्ध कर रहे हैं और उनके कर्मों में पवित्रता का बल भर रहे हैं। इससे ही विश्व में शान्ति की शक्ति बढ़ रही है और वह दिन दूर नहीं जबकि सारे विश्व में शान्ति स्थापन हो जाएगी। जहाँ इस शान्ति-शक्ति की क्रिया अभी शुरू नहीं हुई वहाँ विज्ञान द्वारा मनुष्यों का जीवन कृत्रिम, सभ्यता स्नेह-रहित, वातावरण तथा अन्त:करण अशान्त है। परन्तु इधर भारत में धीरे-धीरे शान्ति की शक्ति (Silence Power) अधिकाधिक मनुष्यों पर अपना प्रभाव डालती जा रही है और उसके प्रभाव का क्षेत्र विस्तृत होता जा रहा है। इस प्रकार वर्तमान समय परमाणु शक्ति विनाश की तैयारी में और परमात्मिक शक्ति सतयुगी, सम्पूर्ण सुख-शान्ति सम्पन्न दैवी सृष्टि की पुन: स्थापना में लगी हुई है। परन्तु प्रथम का तो मनुष्य मात्र को पता है क्योंकि वह भौतिक शक्ति है किन्तु परमात्मिक शक्ति का केवल उन्हीं को परिचय है जो उसके सम्पर्क में आये हैं और जो आध्यात्मिक पुरुषार्थ के द्वारा सृष्टि को सुख-शान्ति सम्पन्न बनाने में विश्वास रखते हैं।

वास्तव में विनाशकारी साइंस-शक्ति अथवा परमाणु शक्ति भी साईलेन्स-शक्ति अथवा परमात्मिक शक्ति ही की प्रेरणा से काम कर

रही है क्योंकि अब स्वयं परमपिता परमात्मा की योजना के अनुसार सतयुगी, दैवी एवं धर्मपरायण सृष्टि की पुन: स्थापना हो रही है। परन्तु लोग नहीं जानते कि परमाणु शक्ति के आविष्कारों का क्या परिणाम होगा और यह किस विराट् योजना के अधीन कार्य में आ रही है, न ही वे यह जानते हैं कि इससे उच्च जो शान्ति-शक्ति अर्थात् परमपिता परमात्मा हैं उन्हीं का कार्य वास्तव में वर्तमान युग की प्रमुखतम घटना है और इसीलिए वर्तमान युग का नाम परमाणु युग की बजाय पुरुषोत्तम शक्ति के द्वारा कलियुगी सृष्टि के महाविनाश और दूसरी ओर परमात्मा द्वारा सतयुगी पवित्र सृष्टि की स्थापना – यह दोनों कर्त्तव्य हो रहे हैं और वर्तमान समय दोनों युगों के मिलाप का समय है।

आज साइंस पावर (Science Power) द्वारा मनुष्य चाँद पर बसने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे कुछ समय के लिए अन्तरिक्ष में स्पेसशिप (Space-Ship) द्वारा जाकर वहाँ जो खुशी का और हल्के-पन (Weightlessness) का अनुभव करते हैं, उसे वे अपनी बहुत बड़ी पहुँच समझते हैं। परन्तु इधर परमात्मा द्वारा योग शक्ति प्राप्त करके मनुष्य सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी देवपद प्राप्त करने अथवा वैकुण्ठ में जाने का पुरुषार्थ कर रहे हैं और ध्यानावस्था के द्वारा अन्त:वाहक शरीर धारण करके दिव्य दृष्टि के साधन से सूर्य, चाँद एवं तारागण से भी पार की पुरियों का भ्रमण करते हल्के पन, अतीन्द्रिय सुख तथा उल्लास का अलौकिक अनुभव कर रहे हैं। परन्तु अभी यह 'पहुँच' जनता की जानकारी में नहीं आई। जिस दिन ये समाचार संसार के समाचार-पत्रों में प्रकाशित होंगे उस दिन संसार के लोग भारत के योग-युक्त पुरुषार्थ पर तथा आत्मिक-शक्ति (Spiritual-Power) पर आश्चर्य करेंगे, जिसकी ओर आज स्वयं भारतवासी भी ध्यान नहीं दे रहे हैं।

# औद्योगिक और राजनीतिक क्रान्ति और शान्ति

सभी वर्गों के लोग अपने मन में यह माने बैठे हैं कि संसार को सुख-शान्ति सम्पन्न बनाने के लिए एक बहुत बड़ी क्रान्ति (Revolution) की आवश्यकता है। राजनीतिक लोग समझते हैं कि किसान और मजदूर को उसकी मेहनत का पूरा मूल्य नहीं मिलता और पूँजीपति लोग उनके खून-पसीने की कमाई पर मौज उड़ाते हैं। अत: वे एक आर्थिक एवं राजनीतिक क्रान्ति लाना चाहते हैं जिससे पूँजीपति और मजदूर एक ही स्तर पर आ जायें और दोनों के बीच कोई फासला या अन्तर न रहे। वे चाहते हैं कि समाज में वंश, धर्म या धन के दृष्टिकोण से कोई ऊँच-नीच या भेद-भाव न रहे। इस प्रकार की विचारधारा को वे साम्यवाद (Communism) अथवा 'समाजवाद' (Socialism) का नाम देते हैं। समाजवाद को विश्व-व्यापी बनाने के लिए चीन और रूस आदि देश और विश्व के अन्यान्य सभी देशों की साम्यवादी पार्टियाँ करोड़ों रुपये खर्च कर रही हैं, अनेक देशों में इस क्रान्ति के लिए सेना और शस्त्रों का भी बहुत बड़े पैमाने पर प्रयोग हुआ है तथा हो रहा है और परिणामस्वरूप खून की नदियाँ बहाई गई हैं।

सभी निष्पक्ष और समझदार लोग जानते हैं कि इससे व्यक्ति या विश्व को शान्ति नहीं मिली बल्कि विश्व दो दलों में बट गया है और कभी क्यूबा, कभी लाओस और कभी वियतनाम में इस कारण से भयानक युद्ध छिड़ जाता रहा है। इस क्रान्ति से हर देश में उथल-पुथल मच गई है, हर कारखाने में साम्यवादियों और पूँजीवादियों के बीच कशमकश चल रही है। परिणामस्वरूप, एक विप्लव और कोलाहल

मच गया है, जहाँ-जहाँ करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति, और लाखों मनुष्यों के प्राण बन्दूकों और बमों को बनाने या चलाने पर व्यर्थ खर्च हो रहे हैं जिससे प्राय: सभी देशों में कमी, महँगाई और कष्ट का अनुभव हो रहा है और आज संसार एक विश्व-युद्ध की ओर बड़ी तेजी से बढ़ रहा है। कौन है जो प्रमाणित कर सकता है कि इस प्रकार की आर्थिक, राजनीतिक या सामाजिक क्रान्ति से देश या व्यक्ति शान्ति के नजदीक पहुँच रहे हैं?

राजनीति में रुचि लेने वाले लोग पहले निरंकुश राजाओं को हटाकर उनकी जगह प्रजातन्त्रीय शासन सत्ताएं स्थापन करने के विचार से भी एक विश्व-व्यापी क्रान्ति लाने में लगे रहे हैं। उसका परिणाम भी दृष्टिगत हो चुका है। हर देश में हर चार-पाँच वर्षों के बाद शासन-सत्ता हथियाने के लिए हलचल होती है, करोड़ों लोग मत-दान देते हैं; उम्मीदवार और उसकी पार्टियाँ करोड़ों रुपये और करोड़ों घण्टे अपने-अपने मत के प्रोपेगेन्डा अथवा मसविदे के प्रचार इत्यादि पर खर्च करते हैं; प्रजा की गाढ़े पसीने की कमाई पर लगे टैक्सों के पैसे से लोग एसेम्बलियों में और पार्लियामेंट में विभिन्न पक्ष लेकर चट्टानों की तरह टकरा कर देश-व्यापी शोरगुल पैदा करते हैं। **इस प्रकार कानून पास होते हैं, प्रस्ताव पास होते हैं, नारे लगाये जाते हैं, मीटिंगें, जलसे पार्टियाँ, प्रेस-कान्फ्रेंसें (Press Conferences), प्रोटेस्ट (विरोध) इत्यादि होते हैं परन्तु जनता फिर भी थर्ड क्लास के डिब्बों में भेड़ों की तरह सफर करती है, दूध फिर भी बोतलों में अथवा अमेरिका से प्राप्त-हुएं पाउडर की पुड़ियों की शक्ल में मिलता है और अनाज के लिए फिर भी विदेशों के आगे हाथ पसारने पड़ते हैं।** स्कूलों और कालेजों में प्रवेश प्राप्त करने की समस्या, मकान और रोजगार की समस्या जान-माल की हिफ़ाज़त की समस्या, गुण्डागर्दी से बचाव की समस्या से लोगों को

फिर भी चैन का साँस नहीं मिलता। इन राजनीतिक क्रान्तियों से कहाँ और किसकों शान्ति मिली है?

दूसरी ओर लोग एक औद्योगिक अथवा तकनीकी (Industrial or Technical) क्रान्ति लाना चाहते हैं। वे समझते हैं कि नये-नये कल-कारखानों को लगाकर और बाँध (Dams) बनाकर तथा बहुत मात्रा में विद्युतोत्पत्ति के लिए प्रबन्ध करके देश-प्रदेश में एक महान् क्रान्ति लाई जा सकती है। उनका विचार है कि इस क्रान्ति से मनुष्य के रहन-सहन और काम करने के तरीके बड़े सुविधाजनक हो सकते हैं, बटन दबाने से ही सब काम चालू हो सकता है, मतलब यह है कि उसे हर प्रकार की सुख-सामग्री सहज ही उपलब्ध हो सकती है और उसकी आय में भारी वृद्धि होने से उसकी आर्थिक दशा भी सुधर सकती है।

**इस प्रकार की वैज्ञानिक और औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम भी किसी से छिपे नहीं हैं। निस्संदेह, साइंस से मनुष्य को बहुत सुविधाएं आदि प्राप्त हुई हैं परन्तु सभी मानते हैं कि मशीन के संग में रहते रहते- मनुष्य भी एक 'मशीन' ही हो गया है। उसने अपनी मानवता के कई अमूल्य गुण खो दिये हैं। वह प्रकृति (Nature) और परमात्मा दोनों से काफी दूर निकल गया है, उसमें प्रेम और सौहार्द पहले की तरह नहीं रहा। आज वह मनुष्य-जीवन को एक मूल्यवान वस्तु नहीं समझता बल्कि उसे भी एक मशीनरी समझकर उससे जैसा-वैसा व्यवहार करता है और उसका जीवन कृत्रिम और सभ्यता भी बनावटी हो गई है।** परिणामस्वरूप, आज मनुष्य के मन में एक बहुत बड़ी खाई पैदा हो गई है। उसके मन में शान्ति नहीं बल्कि शान्ति के लिए केवल तड़प रहा है। साइंस और तकनीकी ने हर वस्तु को अपनी प्रयोगशाला (Laboratory) अथवा कारखाने में बना लिया है परन्तु साइंस दान

शान्ति को नहीं बना सके। वे भी आज सुख की नींद नहीं सो सकते बल्कि दवाइयाँ लेने से ही उनकी भी पल भर के लिए आँख लगती है।

इस प्रकार, हर वर्ग और हर विचारधारा के लोगों ने अपने-अपने तौर से क्रान्ति लाने की कोशिश की ताकि मनुष्य के जीवन में सुख और शान्ति आये परन्तु वास्तव में मनुष्य सुख और शान्ति से दूर होता गया। अनेक प्रकार की क्रान्तियाँ और नारों ने मनुष्य के जीवन को और भी अशान्त बना दिया है और विश्व में संघर्ष को भी बढ़ा दिया है तथा भाई-भाई को और देश-देश को आपस में भिड़ा भी दिया है।

अत: जबकि सभी प्रकार की क्रान्तियों के परिणाम स्पष्ट रूप से हमारे सामने हैं; हमें यह समझ लेना चाहिए कि इन क्रान्तियों से शान्ति होने वाली नहीं है। **शान्ति-होगी व्यक्ति के जीवन में आध्यात्मिक क्रान्ति लाने से। जब तक मनुष्य की आत्मा में पारस्परिक प्रेम, सहानुभूति, कल्याण भावना, करुणा, अहिंसा, ईश्वर निष्ठता इत्यादि गुण स्थापित न होंगे तब तक शान्ति स्थापित नहीं हो सकती, नहीं हो सकती। जब तक मनुष्य को देवता बनाने के 'आध्यात्मिक कारखाने' देश में न लगेंगे तब तक अन्य किसी भी उपाय से कानून बनाये रखने की समस्या, मनुष्य द्वारा अन्य किसी मनुष्य के शोषण की समस्या अथवा अन्य किसी अशान्ति पैदा करने वाली स्थिति का सुधार अथवा हल नहीं होगा, नहीं होगा।**

यह केवल सिद्धांत की बात नहीं है बल्कि ठोस अनुभव में आई हुई प्रत्यक्ष सत्यता है। परमपिता शिव के आदेश और निर्देश से भारत में और सारे विश्व में आध्यात्मिक क्रान्ति लाने के लिए भारत के विभिन्न नगरों में जो 'ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय सेवा-केन्द्र' अथवा 'ईश्वरीय विश्व विद्यालय' स्थापित किये गये हैं, उनके प्रयत्नों से अनेकानेक

मनुष्यात्माओं को सच्ची शान्ति मिली है क्योंकि उनके जीवन में पवित्रता की स्थापना हुई है। निश्चय ही यह ईश्वरीय संदेश और शिक्षा चारों दिशाओं में फैलेगी और इस आध्यात्मिक क्रान्ति से सच्ची शान्ति भी स्थापित होकर रहेगी।

# योग, विज्ञान और मनोविज्ञान

आज लोग विज्ञान के चमत्कारों से बहुत प्रभावित हैं। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं ने पिछले लगभग डेढ़ सौ वर्षों में वह अभूतपूर्व प्रगति की है जो पिछले दो हज़ार वर्षों में भी नहीं हुई। विज्ञान के इस तीव्र वेगी विकास ने मनुष्य को भौतिक सुख-सुविधा के अनगिनत साधन दिये हैं। यदि इन सब सुखों की एक लम्बी सूची तैयार की जाय और उन सुखों को कुछ शीर्षकों के अन्तर्गत लिखा जाय तो मुख्य रूप से वे शीर्षक ये होंगें- (१) स्वास्थ्य और स्वच्छता में वृद्धि करने अथवा रोगों की चिकित्सा और आयुष्य में वृद्धि करने सम्बन्धी (२) यातायात और कार्य को शीघ्र तथा सुविधापूर्वक सम्पन्न करने सम्बन्धी (३) उत्पादन में वृद्धि करने, वस्तुओं की जीन्स अथवा क्वालिटी (quality) को ऊँचा बनाने तथा उनमें परिवर्तन लाने सम्बन्धी (४) मनुष्य को मनोरंजन, सजधज, बनाव-शृंगार, रूप-सौन्दर्य तथा क्षण-भंगुर खुशी देने सम्बन्धी (५) सूचना-प्रसार, प्रचार, समाचार के लेन-देन तथा विकारों के आदान-प्रदान और प्रकाशन सम्बन्धी (६) आविष्कार, खोज, अनुसन्धान तथा जानकारी के कार्य को आगे बढ़ाने सम्बन्धी।

### क्या इन सभी आविष्कारों के फलस्वरूप संसार की हालत बदली है?

विज्ञान ने उपरोक्त छह मुख्य शीर्षकों के अन्तर्गत मनुष्य के सुख या सुविधा के लिए जो सामग्री जुटाई है, उसके पीछे करोड़ों मनुष्यों का कई जीवनों का पुरुषार्थ है और उस पर इतना धन तथा समय (man-hours) लगा है कि जिसका कोई हिसाब नहीं है। परन्तु उसके बावजूद भी हम देखते हैं कि संसार की हालत कोई ज्यादा सुधरी नहीं है, मनुष्य के व्यवहार में तो बिल्कुल परिवर्तन नहीं हुआ है बल्कि

पतन ही हुआ है और नये-नये प्रकार के रोग, कष्ट, दु:ख अथवा अशान्ति के कारण हमारे सामने आये हैं। लोगों के जीवन में कृत्रिमता आई है, अनाचार और अत्याचार में भी वृद्धि ही हुई है, मनुष्य का स्वभाव अधिक कुटिल तथा दानवी बना है और संसार में वैमनस्य, दरिद्रता, बेरोजगार, दु:ख आदि में कमी नहीं हुई है।

### एक अन्य अद्भुत विज्ञान और उसके फल

परन्तु एक विज्ञान ऐसा भी है जिसके द्वारा सुख प्राप्त करने के लिए एक फूटी कौड़ी भी खर्च नहीं करनी पड़ती। उसके लिए सैंकड़ों वर्ष पुरुषार्थ करने की भी जरूरत नहीं। वह विज्ञान अकेला ही उपरोक्त छहों प्रकार के सुख प्राप्त करने के योग्य हमें बना देता है। उस विज्ञान द्वारा सृष्टि की रूप-रेखा, आचार परम्परा, व्यवहार-विचार, सब-कुछ बदल जाता है। तब यहाँ कोई भी दु:खदायक व्यक्ति नहीं रहता, न कोई कष्टकारक रीति-नीति ही रहती है। उस विज्ञान का नाम 'योग' है। उस विज्ञान की शिक्षा गीता-के-भगवान् स्वयं अवतरित होकर देते हैं। उस विज्ञान द्वारा मनुष्य को निरोगी काया मिलती है और वह अमर देव पद को प्राप्त कर लेता है। उसे यातायात के लिए पुष्पक आदि विमान मिलते हैं और उस विज्ञान के द्वारा स्थापित हुए लोक में अथवा उस द्वारा लाये गए नये युग में सब वस्तुओं की उत्पत्ति इतनी मात्रा में होती है और उनकी जाति (Genes) इतनी उत्तम होती है कि मनुष्य को किसी पदार्थ की कमी नहीं रहती और उस लोक को 'सुखधाम' अथवा 'स्वर्ग' कहा जाता है। उस द्वारा मनुष्य को कुदरती तौर पर पूर्ण सौन्दर्य प्राप्त होता है और मनोरंजन के अनगिनत एवं दिव्य साधन उपलब्ध होते हैं। कहने का भाव यह है कि विज्ञान द्वारा प्राप्त होने वाले उपरोक्त छहों प्रकार का विकास 'योग रूप विज्ञान' द्वारा अति सहज,

दिव्य, सम्पूर्ण और सर्व-हितकारी रूप में प्राप्त होता है।

## योग द्वारा उत्कृष्ट ज्ञान की प्राप्ति

पुनश्च, विज्ञान मनुष्य को सृष्टि के जिन रहस्यों का बोध कराता है और समाचार प्राप्त करने तथा प्रसारित करने के जो यन्त्र अथवा साधन प्रदान करता है, उससे कहीं अधिक ज्ञान (मनुष्य सम्बन्धी तथा सृष्टि-सम्बन्धी लाभप्रद जानकारी) योग रूपी विज्ञान द्वारा मनुष्य को प्राप्त होती है। योग मनुष्य को सूर्य और तारागण के पार के लोकों का भी सहज ही ज्ञान कराता है तथा संसार या समाज की आगे आने वाली परिस्थितियों का भी अग्रिम साक्षात्कार कराता है। वैज्ञानिक आकाश में उपग्रह अथवा सेटेलाइट (Sattelites) स्थापित करके उन द्वारा सूचना-प्रसार करते तथा आने वाली परिस्थितियों को पहले से जानने के योग्य होते हैं, परन्तु योगी त्रिकालदर्शी एवं त्रैलोकज्ञ परमात्मा से सम्बन्ध स्थापित करके सब-कुछ जान लेते हैं। वैज्ञानिक तीव्र-वेग व कष्टों द्वारा जहाँ पहुँच पाते हैं, योगी दिव्य प्रज्ञा[१] अथवा ऋतम्भरा बुद्धि[२] द्वारा वहाँ सहज ही पहुँच जाते हैं। वैज्ञानिकों के पास टेलीविजन, टेलीस्कोप, वायरलेस इत्यादि साधन हैं, योगी के पास दिव्य दृष्टि इससे बहुत उत्तम और सूक्ष्म रूप से कार्य करती है।

पुनश्च, हम देखते हैं कि विज्ञान के जो बहुत ही महत्वपूर्ण, अद्भूत एवं लाभकारी आविष्कार हैं, उनमें भट्ठी (Furnace), (२) विद्युत-चुम्बकीय साधन; (Electro-magnetic system) और उस द्वारा (३) रिमोट कन्ट्रोल (Remote Control) तथा (४) परमाणु और उससे भी सूक्ष्म विद्युत-कणों का तथा शक्ति के अन्यान्य रूपों (ध्वनि, चुम्बकीय शक्ति इत्यादि) का ज्ञान या तत्सम्बन्धी आविष्कार शामिल

१. दिव्य बुद्धि २. पवित्र एवं सत्य-दर्शी बुद्धि

हैं। ठीक इसी प्रकार का अध्ययन-क्षेत्र अथवा अनुभव-क्षेत्र योग रूपी विज्ञान का भी है। योग रूपी विज्ञान परमाणु से भी अधिक सूक्ष्म जो 'आत्मा' है, उसका अनुभव एवं बोध कराता है। वह एक ऐसी तेज भट्ठी तैयार करता है जिनमें कि आत्मा के जन्म-जन्मान्तर के संस्कार पिघल कर अथवा गलकर सात्विक हो जाते हैं और आत्मा शुद्ध हो जाती है। यह विज्ञान परमात्मिक शक्ति उपलब्ध कराता है, परमात्मा, जो कि प्रकाश (Light) और शक्ति (Might) का पुँज है, उसकी अनुभूति कराता है। जैसे शरीर-विज्ञान शरीर-रचना (Anatomy of the body) का परिचय देता है वैसे ही योग-विज्ञान मन-बुद्धि-संस्कार रूप आत्मिक योग्यताओं का ज्ञान कराता है।

## योग एक उत्तम मनोविज्ञान भी है

हम ऊपर बता आए हैं कि विज्ञान द्वारा इतने आविष्कार होने पर भी मनुष्य के मन में शान्ति नहीं है बल्कि आज मानसिक रोगों तथा दु:खों में वृद्धि ही हुई है। मनुष्य क्षण में ही अपने मानसिक संतुलन को खो बैठता है, उत्तेजित हो जाता है, घबरा जाता है, परेशान हो उठता है, सटपटा जाता है या उलझा हुआ सा मालूम पड़ता है। अत: इन उलझनों, मानसिक पेचीदगियों (mental complexes), उत्तेजित अवस्थाओं (Tensions), मानसिक असन्तुलन (mental imbalance), आवेग-सम्बन्धी अशांति (emotional disturbances) या व्यवहार-सम्बन्धी त्रुटियों (Behaviour defects) इत्यादि को ठीक करने के लिए मनोविज्ञान और उसकी एक विशिष्ट शाखा-मनोविश्लेषण (Psycho-analysis) तथा मानसिक रोगों के इलाज सम्बन्धी विद्या (Psychiatry) इत्यादि ने विकास पाया है। परन्तु क्या इससे मनुष्य का जीवन सुखी हुआ है तथा उसका स्वभाव एवं व्यवहार

सामान्य (normal) हुए अथवा सुधरे हैं? मानव के चरित्र या मानसिक सन्तुलन में तो हम कोई प्रगति नहीं देखते हैं।

इसके विपरीत योग रूप विज्ञान न केवल हमें मन, बुद्धि, संस्कार, स्वभाव, व्यवहार, चरित्र इत्यादि से सम्बन्धित अद्‌भुत ज्ञान देता है बल्कि मनुष्य की प्रवृत्तियों (instincts) का मार्गान्तरीकरण (Redirection) तथा शुद्धिकरण (Sublimation) करके उसके व्यवहार एवं आचार को सुधारता है और उसके संस्कारों को सतोप्रधान बनाकर उसे देव-तुल्य बनाता है। योग रूप विज्ञान मनुष्य के आवेगों (emotions) को नियन्त्रित करता है तथा मनुष्य के विचारों को व्यवस्थित एवं सुलझा हुआ बनाता है। इस विज्ञान द्वारा मनुष्य की मानसिक एकाग्रता (Power of concentration) भी बढ़ती है और उसे एक स्थाई शान्ति का अनुभव रहता है तथा एक दिव्य खुशी, जिसे 'नारायणी नशा' कहा जाता है, सदा महसूस होता है। उसके व्यवहार में परिवर्तन आ जाने के फलस्वरूप, लोगों के साथ उसका मन-मुटाव, उनके प्रति द्वेष या ईर्ष्या, क्रोध या नाराज़गी उसके मन में नहीं उत्पन्न होते, उसके मन में आवेगों के ज्वार-भाटे नहीं उठते, मानसिक ज्वर पैदा नहीं होते, बल्कि उसे 'स्थित-प्रज्ञ' अवस्था, एकरस अवस्था अथवा आनन्द-विभोर अवस्था प्राप्त होती है।

## सर्व प्राप्तियों का मूल

इस प्रकार, हम देखते हैं कि रसायन विज्ञान (Chemistry), भौतिक विज्ञान (Physics), वनस्पति विज्ञान (Botany), शरीर विज्ञान (Physiology), चिकित्सा विज्ञान, इत्यादि सभी विज्ञानों द्वारा मनुष्य के जीवन को उन्नत, विकसित, तथा सुख एवं सुविधापूर्वक बनाने के जो प्रयास हैं, उन सबके प्रयोजन एवं प्रयास इस योग

रूप विज्ञान द्वारा पूरे होते हैं। कहा जाता है कि रसायन विज्ञान का प्रारंभ इस विषय को लेकर हुआ कि अमृत का आविष्कार किया जाय जिससे कि मनुष्य अमर हो जाय और एक ऐसे साधन (पारस) की खोज की जाय जिससे लोहा सोने में परिवर्तित किया जा सके। इतने परिश्रम के बाद भी आज तक तो ऐसा हो नहीं सका। परन्तु योग रूप विज्ञान द्वारा यह एक दृष्टिकोण से होना सम्भव है। योग द्वारा मनुष्य अमरत्व को अर्थात् देव पद को प्राप्त होता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि वह शरीर नहीं छोड़ता बल्कि वह देव-तुल्य पवित्र बनने के बाद दु:खपूर्वक शरीर नहीं छोड़ता बल्कि पूरी आयु भोग कर अन्त में शरीर को वैसे ही छोड़ देता है जैसे सर्प अपनी पुरानी खाल को उतार फैंकता है। इसी प्रकार योग द्वारा कलियुग, जिसे कि 'लोह युग' (Iron Age) भी कहा जाता है, बदल कर सतयुग, जिसे कि 'स्वर्ण युग' (Golden Age) भी कहा जाता है, बन जाता है। इस मुहावरे में योग-विज्ञान लोहे को सोने में बदलने अर्थात् तमोगुणी मनुष्यों को सतोप्रधान बनाने के कार्य में शिरोमणि का कार्य करता है।

योग के जितने लाभ गिनावें उतने थोड़े हैं। कोई भी तो ऐसा सुख नहीं है जो योग रूप विज्ञान के फलस्वरूप प्राप्त न होता हो। एक इस गुह्य विद्या को अथवा सूक्ष्मातिसूक्ष्म विज्ञान को हाथ कर लेने से मनुष्य को सर्व प्राप्तियाँ हो जाती हैं; उसकी और कोई भी इच्छा नहीं रहती। परन्तु कितने अफसोस की बात है कि स्वयं भारत, जहाँ पर ही अवतिरत होकर परमपिता परमात्मा इस गुह्यतम विद्या की शिक्षा देते हैं, के लोग भी आज इससे विमुख हैं। यदि आज भी भारत के लोग इसे अपनायें तो भारत सभी देशों का मुकुटमणि बन सकता है और यहाँ से दु:ख, दरिद्रता, आसुरी प्रवृत्तियाँ तथा प्रकोप दूर हो सकते हैं।

# धर्म और विज्ञान

## – २ –

पिछले लगभग २०० वर्षों में विज्ञान ने मानव जगत में काफी परिवर्तन लाया है। विज्ञान ने ऐसे भौतिक साधनों का निर्माण किया है कि मनुष्य के खान-पान, रहन-सहन, यातायात तथा पारस्परिक सम्पर्क एवं व्यवहार-व्यापार के तरीकों में भी बहुत परिवर्तन आ गया है। विज्ञान की इस बहुमुखी प्रगति को देखकर तथा उस द्वारा आश्चर्यजनक एवं कल तक असम्भव माने जाने वाली उपलब्धियों को देखकर लोग इससे अत्यन्त प्रभावित हुए हैं फिर भी विज्ञान जिस प्रणाली से खोज करता अथवा किसी निष्कर्ष पर पहुँचता है, वह प्रणाली भी आज बहुत प्रिय हो गई है। वैज्ञानिक जो कुछ कहता है, उसे वह अपनी प्रयोग-शाला में प्रमाणित करके दिखा देता है। विज्ञान की इस अध्ययन विधि का एक फल यह भी है कि विभिन्न देशों में रहने वाले वैज्ञानिक किसी विषय पर प्राय: एक मत होते हैं। इसका प्रभाव सामान्य लोगों पर अच्छा पड़ता है।

### विज्ञान द्वारा अन्धश्रद्धा पर आघात

दूसरी ओर हम देखते हैं कि इन पिछली दो शताब्दियों में संसार में धर्म का प्रभाव कम होता आया है। न केवल धार्मिक आस्थाओं को छोड़ने वालों की संख्या अनुपातत: बढ़ती गयी है बल्कि धर्मवक्ताओं में भी अपने दृष्टिकोण धर्मपालन, आचरण तथा साधना प्रणाली में थोड़ा-बहुत अन्तर आया है। इस परिवर्तन में विज्ञान का भी हाथ है। विज्ञान ने एक ओर तो कई पुरानी धार्मिक मान्यताओं को गलत सिद्ध किया है और उसके फलस्वरूप लोगों में यह एक ख्याल पैदा हो गया

है कि कई धार्मिक मान्यताएं या तो अन्धश्रद्धा पर आधारित हैं या ग्रंथों में जिस भाव से उन्हें लिखा गया, आज वह भाव किसी को मालूम नहीं। अत: आज वह अटूट श्रद्धा कम लोगों में रही है। उदाहरण के तौर पर विज्ञान ने यह निष्कर्ष मानव के सामने रखे हैं कि चाँद पर स्वर्गलोक नहीं है जैसे कि कई धर्मों में पहले माना जाता रहा है, पृथ्वी चपटी नहीं है बल्कि गोल है, जमीन से जो फसलें पैदा होती हैं अथवा माता के गर्भ से जो बच्चा पैदा होता है उनकी उत्पत्ति भी वैज्ञानिक नियमों के अनुसार होती है; इसके बारे में अचम्भा या किसी रहस्यपूर्ण दैवी शक्ति का हाथ मानने की आवश्यकता नहीं है। कई धार्मिक आचार्य या ग्रंथ पहले यह दृष्टान्त दिया करते थे कि जैसे गोबर से बिच्छू पैदा हो जाते हैं अथवा मकड़ी अपने मुख से जाल निकालती है वैसे ही जड़ से चेतन और चेतन से जड़ पैदा हो सकता है; अत: संसार का मूल तत्व एक ही है। परन्तु विज्ञान ने अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा अर्थात् माइक्रोस्कोप द्वारा यह प्रमाणित कर दिया है कि गोबर में तो पहले से ही कीटाणु होते हैं। वे ही अपनी खुराक लेकर वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार बहुत-सी बातों पर विज्ञान ने प्रकाश डाला है। इसके अतिरिक्त विज्ञान की जो कार्य-विधि है, उसका जो प्रैक्टीकल अथवा व्यावहारिक तरीका है, उसके परिणाम स्वरूप भी लोगों में आज सोचने के तरीके में काफी अन्तर आया है और वे जागरूक हो गये हैं। वे हरेक बात का व्यावहारिक प्रमाण माँगने लगे हैं तथा प्रत्यक्ष फल देखना चाहते हैं।

एक बात यह भी है कि विज्ञान ने जीवन की गति को इतना तेज़ कर दिया है तथा मशीनों और वैज्ञानिक प्रसाधनों की ऐसी भरमार लगा दी है कि मनुष्य के पास आज पहले की तरह ज्यादा अवकाश नहीं है कि वह कर्मकाण्ड में इतना समय दे सके या पाठ-पूजा में पहले की

तरह लगा रहे। फिर, पिछली कई शताब्दियों में धर्म के नाम पर जो दंगे अथवा युद्ध होते रहे हैं, उनके कारण से भी लोगों में धर्म के प्रति अश्रद्धा बढ़ी है। विशेषकर यह देखकर कि धर्म-प्रचारकों अथवा धर्माचार्यों में एक विषय पर एक मन्तव्य नहीं है, लोगों के मन में उलझन-सी पैदा हुई कि आखिर कौन-सा मत ठीक है और उनके मन में विचार आया कि धर्म-ज्ञान शायद सत्य नहीं है। वर्ना धर्माचार्यों में एकता होनी चाहिए थी जैसे कि वैज्ञानिकों में है। इससे भी कई लोगों ने इसे एक व्यर्थ का झमेला मानकर छोड़ दिया। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि आज संसार में धर्म समाप्त हो गया है या आज उसकी आवश्यकता नहीं है! सही धर्म की नीति असत्यता एवं अन्धश्रद्धा नहीं है। धर्म के महत्व पर विचार करने से पहले हमें थोड़ा यह विचार कर लेना चाहिए कि धर्म है क्या, अर्थात् 'धर्म' शब्द का अर्थ क्या है?

### धर्म का सम्बन्ध कर्म से है

वास्तव में धर्म का अर्थ है – 'धारणा'। जीवन में ऐसे नैतिक मूल्यों की धारणा, जिससे हमारा कर्म श्रेष्ठ हो तथा हमारे तथा समाज के जीवन में शान्ति एवं सुख की बेल फले-फूले – 'धर्म' है। धर्म किसी बाह्य रूप-रेखा या सजधज का नाम नहीं है, बल्कि इसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य के कर्म से अथवा उसकी दृष्टि, वृत्ति एवं मानसिक स्थिति से है। धर्म मनुष्य को उसका कर्त्तव्य सुझाता है ताकि उसका निजी जीवन, पारिवारिक जीवन तथा सामाजिक जीवन का कार्य ठीक तरह चले और सभी के साथ उसका नाता भाई-चारे का तथा दृष्टिकोण कल्याण का बना रहे और प्रभु-प्रीति बनी रहने से, अपनी वृत्ति सात्विक रहे। यदि कोई धर्म यह कार्य नहीं करता तो गोया वह या तो धर्म नहीं है या उसमें कोई त्रुटि है।

## दोनों का क्षेत्र अलग-अलग

विज्ञान का अपना अलग ही अध्ययन क्षेत्र तथा कार्य-क्षेत्र है। विज्ञान – प्रकृति, प्राकृतिक शक्तियों, परिवर्तनों अथवा परिणामों का अध्ययन अथवा अनुशीलन करता है। वह मनुष्य को भौतिक सुख उपलब्ध कराता है। अतः इसका अपना महत्व और स्थान है। धर्म मनुष्य को अभौतिक अथवा प्रकृति से परे के क्षेत्र में ले जाता है। वह मनुष्य का ध्यान आत्मा की ओर आकर्षित करता है और आपस में आत्मिक नाते से विश्व-बन्धुत्व की भावना पैदा करना चाहता है। वह इस कार्य में सफल रहा है या नहीं वह अलग बात है। धर्म – मनुष्य के व्यवहार, व्यापार, विचार इत्यादि के लिए कोई नियम अथवा मर्यादायें निर्धारित करता है तथा उसे एक उच्च लक्ष्य प्रदान करके महानता की ओर प्रेरित करता है। वह उसका नाता परमात्मा से जोड़कर इन्द्रियातीत सुख अथवा आनन्दावस्था में ले जाना चाहता है। विज्ञान मनुष्य की इच्छाओं को पूर्ण करने के साधन ढूँढता है परन्तु धर्म मानव की इच्छाओं को अंकुश में रखने का यत्न करता है। अतः विचार करने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि 'धर्म और विज्ञान' परस्पर पूरक हैं, वे दोनों ही मानव के लिए ज़रूरी हैं। विज्ञान सुख के लिए और धर्म आचरण तथा शान्ति के लिए।

## धर्म का अध्ययन वैज्ञानिक रीति से

इसके अतिरिक्त, मेरा अनुभव यह कहता है कि धर्म का अध्ययन भी वैज्ञानिक रीति से हो सकता है। चूँकि धर्म का विषय आत्मा है जो कि इन्द्रियातीत एवं सूक्ष्म पदार्थ है, इसलिए इसके अध्ययन में कोई स्थूल वैज्ञानिक साधन तो नहीं अपनाये जा सकते परन्तु इसके लिए प्रणाली वैज्ञानिक हो सकती है। मैं यह मानता हूँ कि वास्तविक धर्म भी

एक ही है अर्थात् धर्म-विद्या के सही निष्कर्ष भी एक ही है और वे विवेक सम्मत तथा तर्क संगत हैं। जो धार्मिक मन्तव्य इस प्रकार के नहीं है। वे त्रुटिपूर्ण हैं, उनका स्रोत ईश्वर अथवा परमात्मा नहीं हो सकता, बल्कि अल्पज्ञ मनुष्य हैं।

इन सभी बातों को सामने रखते हुए मेरी धारणा तो यह है कि धर्म मानव के लिए परमावश्यक है वर्ना मानव अपनी मानवता से भी गिर जाता है। कुछ वर्ष हुए मैंने यूरोप, अमेरिका, तथा दस एशियाई देशों का भ्रमण किया है, मुझे ऐसा लगा कि मानव आज वास्तविक धर्म से विमुख होने के परिणामस्वरूप अशान्त है तथा वासना-प्रधान, विलासता-प्रिय और भोगान्मुख होता जा रहा है और इनका परिणाम स्पष्ट रूप से घातक है। आज मानव को अनेक भौतिक सुख उपलब्ध होते हुए भी उसके मन में तनाव बना रहता है और वह मादक द्रव्यों तथा मन बहलाव के बनावटी साधनों को ढूँढता फिरता है और धर्म को छोड़कर अनेक मानसिक रोगों से पीड़ित है। यह उसकी भूल है। विज्ञान और विवेक-सम्मत धर्म, यह मानव की दो टाँगों की तरह हैं। दोनों ही ज़रूरी भी हैं और शोभनीय भी हैं।.....हाँ, दोनों का विकृत रूप समाज के लिए हानिकारक है।

## धर्म की आवश्यकता

आज वास्तविक धर्म के अभाव में विज्ञान ने भी मानव समाज के लिए खतरा पैदा कर दिया। उसने आणविक शस्त्र बनाकर संसार को विनाश के निकट लाकर खड़ा कर दिया है। यद्यपि विज्ञान ने मानव को चाँद पर उतारने में सफ़लता तो प्राप्त की है परन्तु उसने मानव के मन को चाँद-जैसी शीतलता प्रदान नहीं की है। उसने कल-कारखाने तो प्रचुर मात्रा में बनाये हैं और प्राकृतिक शक्तियों को अपने वश में

किया है, परन्तु मानव अपने मन को अथवा अपनी कर्मेन्द्रियों को वश में नहीं कर सका है जिसका परिणाम यह है कि वह दानव बनता जा रहा है। अत: आज धार्मिक शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है वर्ना विज्ञान भस्मासुर की तरह स्वयं की उपलब्धियों को भस्म कर देगा।

मुझे एक ओर तो यह देखकर निराशा होती है कि लोग धर्म-विमुख होते जा रहे हैं परन्तु दूसरी ओर मेरे मन में आशा का अभ्युदय होता है जब मैं यह देखता हूँ कि धर्म की पुन: स्थापना का ईश्वरीय कार्य भी जोर-शोर से चल रहा है। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय द्वारा निर्मित जिन प्रदर्शनियों का आयोजन मैंने अभी अन्य देशों में भी किया तो मुझे उसका उत्साह-जनक फल निकलता दिखाई दिया। इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का मुख्य ध्येय ही धर्म द्वारा आचरण की श्रेष्ठता, योग द्वारा ईश्वरानुभूति तथा ज्ञान द्वारा समाज-कल्याण करके एक नये समाज का निर्माण करना है जिसमें विज्ञान और धर्म दोनों सहायक हों और लोग सुख तथा शान्ति दोनों से युक्त हों। सतयुगी समाज की स्थापना का यह ईश्वरीय कार्य शीघ्र ही होता दिखाई देता है।

# धर्म एवं अध्यात्म का स्वरूप और सम-भावना

मनुष्यात्मा को शुद्ध व सुदृढ़ बनाने और विकारों के बन्धन से मुक्त करने के लिए आध्यात्मिक पुरुषार्थ एक प्रभावशाली उपचार है। जिस प्रकार शारीरिक रोग के उपचार में रोगी की अवस्था को ध्यान में रखने के साथ-साथ समय और स्थान को भी ध्यान में रखकर औषधि दी जाती है उसी प्रकार विकृत आत्मा अर्थात् विकृत मानव संस्कार के उपचार में भी अन्त: स्थिति और बाह्य परिस्थिति को ध्यान में रखना आवश्यक है। व्यक्ति समाज का एक अंग है। व्यक्ति का प्रभाव समाज पर और समाज का प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है; अत: व्यक्ति का आध्यात्मिक प्रयास समाज से बिल्कुल अलग नहीं किया जा सकता। जहाँ व्यक्ति की आध्यात्मिक चेतना जागृत करने की आवश्यकता है वहीं उसे सामाजिक उत्थान का माध्यम भी बनना है। अत: अध्यात्म केवल एक व्यक्तिगत विषय नहीं है परन्तु इसे समाज शास्त्र के ही एक अंग के रूप में देखना और समझना होगा। इस पृष्ठभूमि में हम देखें कि आज अध्यात्म के क्षेत्र में मनुष्य क्या कर रहा है? किस उद्देश्य से कर रहा है? उससे उसकी व्यक्तिगत अथवा समाज की आवश्यकता कहाँ तक पूरी हो रही है? और अध्यात्म का वह वास्तविक शक्तिशाली रूप कौन-सा है जिसमें आज के संसार की जटिलतम समस्याओं का समाधान करने की शक्ति है।

## व्यक्तिवादी अध्यात्म

यों तो भिन्न-भिन्न धर्म सम्प्रदाय और उनकी शाखायें प्रतिशाखायें अपने-अपने रीति-रिवाज और मान्यता अनुसार जो कुछ कर रहे हैं उनमें तो अनेक प्रकार की भिन्नता मिलेगी। परन्तु वर्तमान समय

के प्रचलित स्वरूपों को मोटे तौर पर दो भागों में बाँट सकते हैं। एक है 'भक्ति' और दूसरा है 'कर्म-संन्यास।'

भक्ति मार्ग में भक्त किसी देवी-देवता, पीर-पैगम्बर, गुरु-गुसाई आदि में श्रद्धा रख उनको पूजता है और प्राय: कर्म-काण्डों द्वारा पोषित हो रहा है। पंचविकारों से ग्रसित मानव भयभीत होकर एक अदृश्य अथवा दृश्य सत्ता की अदृश्य शक्ति को अपने लिए एक बचाव की छतरी (defence umbrella) के रूप में इस्तेमाल करना चाहता है। उसे यह 'प्रलोभन' है कि यदि वह इन देवी-देवताओं, पीर-पैगम्बर अथवा गुरु-गुसाइयों की खुशामद करेगा तो वह उसके धन-पुत्र आदि की क्षणिक लालसाओं की सहज पूर्ति करेंगे। उसे यह भय है कि यदि ये हम से रुष्ट हुए तो हमारा अनिष्ट होगा। इस प्रकार का तथाकथित आध्यात्मिक पुरुषार्थ भय और प्रलोभन की आधारशिला पर खड़ा होकर दूसरों से दया की भीख माँगता रहता है। आत्म-शक्ति भर कर स्वयं को शक्तिशाली नहीं बनाता। उसमें स्वयं की समस्याओं को सुलझाने की शक्ति नहीं आती तो वह समाज की समस्याओं का समाधान कैसे कर सकता है?

दूसरे प्रकार के आध्यात्मिक पुरुषार्थ — 'कर्म-संन्यास' में तो समाज का कोई स्थान नहीं है। कर्म-सन्यासी तो इस शरीर और संसार को स्थायी और अपरिवर्तनीय रूप से दु:ख और अशान्ति का स्थान समझ कर, इससे पूर्ण छुटकारे अथवा मुक्ति को ही अपना साध्य मानते हैं। जन्म-मरण के चक्र से सदाकाल का पूर्ण छुटकारा ही उनके अनुसार सभी मानवी समस्याओं से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय है। इसके लिए वह समाज और कार्यव्यस्त संसार को छोड़कर जंगल और पहाड़ों में अपने को छिपाते हैं। अपने को पूर्ण रीति से निस्संकल्प करने के लिए समाधि आदि को साधन के रूप में अपनाते हैं।

उपरोक्त दोनों प्रकार के प्रचलित आध्यात्मिक पुरुषार्थ पूर्णतया व्यक्तिवादी हैं। इसमें से किसी ने भी समाज को सुदृढ़, सुखमय अथवा शान्तिमय बनाने में न अब तक कोई योगदान किया है और न भविष्य में ही उनसे ऐसी कोई आशा की जा सकती है। भक्ति-मार्ग तो पूर्ण रूप से 'संकीर्ण व्यक्तिगत स्वार्थ' पर आधारित है। उसमें समाज की समस्याओं को सुलझाने की शक्ति हो ही नहीं सकती। अन्धविश्वास से पोषित होने के कारण वह स्वयं को भी समाज का शक्ति-सम्पन्न अंग नहीं बना सकता। वह तो बहुत ही संकीर्ण क्षेत्र में, व्यक्तिगत प्रतिस्पर्धा के रूप में पनपता है। संन्यास मार्ग तो समाज को क्या परन्तु स्वयं को भी 'अस्तित्व हीन' करने का लक्ष्य रखता है। सामाजिक उत्थान अथवा सामाजिक समस्याओं के समाधान की तो उसकी इच्छा ही नहीं है। इस प्रकार यह दोनों आध्यात्मिक मार्ग समाज का हित करने में असमर्थ रहे हैं। यही कारण है कि इनके होते हुए भी समाज में नैतिक और चारित्रिक स्तर गिरता ही आया है।

## विश्व की वर्तमान परिस्थिति

विश्व की वर्तमान परिस्थिति बहुत ही जटिल और भयावह है। जितना-जितना मनुष्य विज्ञान और तकनीक में प्रगति कर रहा है। जितना-जितना उसने पुराने आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक ढाँचे को बदलने के लिए संघर्ष किया और बदला भी, उतना-ही-उतना संसार और उसका हर अंग और ही अधिक जटिलतम समस्याओं में उलझता गया है। आज संसार उस चौराहे पर खड़ा है जहाँ उसे पता नहीं चल रहा है कि किधर जायें। किंकर्तव्यविमूढ़ की-सी स्थिति है। हर तरफ भयानकता छाई है। विश्व अपने को ज्वालामुखी के मुहाने पर बैठा हुआ अनुभव कर रहा है जो किसी भी समय भीषण अग्नि की

ज्वाला उगल कर उसे भस्मीभूत कर सकती है। भौतिक सुख के साधनों से भरपूर मनुष्य अपने को असुरक्षित अनुभव कर रहा है। हर मुख पर विषाद की छाया है। प्रत्येक हृदय में अशान्ति की आँधी चल रही है। सभी प्रकार की आर्थिक, राजनीतिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक और सामाजिक क्रान्ति के फल से हताश होने के पश्चात् मनुष्य आध्यात्मिक क्रान्ति की ओर एक क्षीण आशा की दृष्टि लगाये हुए है। 'क्षीण' क्यों? क्योंकि अभी तक के आध्यात्मिक प्रयासों का कोई फल नहीं निकला। धर्म के नाम पर और ही अधर्म फैला है। साम्प्रदायिकता के विष ने वैमनस्यता ही बढ़ाई है। इसलिए इससे भी लोक हताश हैं परन्तु फिर भी आशा की किरण इधर ही दिखाई देती है क्योंकि इतना तो स्पष्ट ही है कि सभी समस्याओं का समाधान मनुष्य के मनोभावों में आमूल परिवर्तन से ही हो सकता है और भावनाओं में आधार-भूत परिवर्तन लाना अध्यात्म का क्षेत्र है। अध्यात्म में ही मनुष्य के विचारों, भावनाओं, आशाओं और आकांक्षाओं को सही दिशा देने की शक्ति है। राजनीतिक, सामाजिक अथवा आर्थिक क्रान्तियाँ एकांगी हैं और उन्हें सुलझाने के साथ-साथ अन्य समस्याओं को जन्म दे देती हैं। इस प्रकार समस्या समाप्त नहीं होती। उसका केवल रूप बदलता है। ऐसी स्थिति में विचारणीय विषय है कि अध्यात्म का यह वास्तविक स्वरूप कौनसा है जो मानव समाज की सच्ची सेवा कर सके।

## समाज-सेवी अध्यात्म

'समाज' शब्द का प्रयोग कर्मशील जगत के लिए होता है। समस्यायें भी कर्मशील जगत की हैं। इसलिए वही आध्यात्मिक ज्ञान समाज के लिए उपयोगी हो सकता है जो कर्म को प्रधानता दे। उसका रूप ऐसा हो जिसमें व्यक्ति अपने विचार और भावना को इस साँचे

में ढाले कि वह बिना किसी दबाव, भय, प्रतिबन्ध अथवा क्षणिक प्रलोभन के, अपनी स्वेच्छा से, इस तरह सोचे, बोले और कर्म करे कि उसके हित के साथ-साथ समाज का भी हित हो। बल्कि यों कहें कि 'व्यक्तिगत हित' और 'सामाजिक हित' में एक ऐसा तादात्म्य स्थापित हो जाय कि दोनों का भेद ही मिट जावे। वास्तव में यह भेद असंगत है और सच्चे व्यक्तिगत हित की अज्ञानता ही इसका मूल है। इस अज्ञानता को दूर करना आध्यात्मिक ज्ञान और आध्यात्मिक पुरुषार्थ का लक्ष्य होना चाहिये। व्यक्ति, समाज का ही एक अंग है। जिस प्रकार पूरे शरीर के हित को ध्यान में रखे बिना शरीर के किसी 'एक अंग' को स्वास्थ्य नहीं मिल सकता। वैसे ही पूरे समाज को सुदृढ़ बनाये बिना व्यक्तिगत हित सम्भव नहीं है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का सिद्धान्त भी इस तथ्य पर आधारित है। विश्व की वर्तमान सभी समस्याओं के मूल में इसी एक बात की अज्ञानता अथवा भूल समाई हुई है।

यह भूल जितना भौतिकवादी कर रहा है उतना ही व्यक्तिवादी अध्यात्म। भौतिकवादी तो फिर भी समय-समय पर इस भूल को महसूस करता रहा है और समय-समय पर आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक क्रान्तियों को जन्म देकर, समाज की व्यवस्था के ढाँचे में परिवर्तन लाकर, समाज की स्थिति सुधारने का प्रयत्न करता रहा है। उसे कुछ तत्कालिक सफलतायें भी मिलीं यद्यपि वह कोई स्थाई हल न निकाल सका। व्यक्तिवादी अध्यात्म का तो इस ओर प्रयास ही नगण्य रहा है यद्यपि यह कार्य अध्यात्म बखूबी कर सकता है। अध्यात्म में ही वह शक्ति है कि जिससे व्यक्ति की वृत्तियों में आमूल परिवर्तन आ जाये। कुवृत्तियाँ ही समस्याओं को जन्म देती हैं और वृत्तियों में परिवर्तन लाकर ही समस्याओं की जड़ काटी जा सकती है।

इस परिवर्तन के लिए अथवा मनुष्य के मनोवैज्ञानिक उपचार के लिए मनुष्य को वर्तमान देह-स्मृति (Body-consiousness) को बदल आत्म-स्मृति (soul-consciousness) की स्थिति धारण करनी है। उसे यह समझना है कि मैं शरीर नहीं बल्कि देह को धारण करने वाली आत्मा हूँ। इस स्मृति परिवर्तन से मनुष्य पंचविकारों से मुक्त हो जायेगा। इन विकारों से मुक्ति ही सर्व समस्याओं से मुक्ति दिला सकती है जब जीवन में रहते अवस्था 'जीवन-मुक्त' की होगी।

मानव प्रवृत्ति के शुद्धिकरण के रूप में अपनाये गये आध्यात्मिक प्रयास में न किसी अन्ध-विश्वास और न कर्मकाण्ड के लिये कोई स्थान होगा और न ही संसार को त्याग कर कर्म संन्यासी बनने की आज्ञा। यह अध्यात्म 'पवित्र प्रवृत्ति मार्ग' का प्रतिपादक होगा और विशुद्ध ज्ञान ही इसकी आधारशिला होगी। ऐसा ज्ञान जो तर्क, अनुभव और विवेक की कसौटी पर खरा उतरे। धर्म को विश्वास की वस्तु (Religion is a matter of faith) न कह कर इसे जीवन के उच्च दर्शन (Philosophy of Life) के रूप में ज्ञान का विषय (Branch of Knowledge) समझा जावेगा। आत्मा का सत्य परिचय, परमात्मा का सत्य परिचय, सृष्टि क्रम का ज्ञान, आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध का स्वरूप व उसकी आवश्यकता, साकार सृष्टि के साकार व्यक्तियों और वस्तुओं के साथ तथा स्वयं अपने शरीर और शरीर के सम्बन्धियों के साथ मनुष्य आत्मा का दृष्टिकोण क्या हो? — ये ही आध्यात्मिक ज्ञान के विषय हैं। आत्मा और परमात्मा के स्नेहमय सम्बन्ध को ही 'योग' शब्द से सम्बोधित किया जाना चाहिये। इस योग का एकमात्र उद्देश्य है कि मनुष्य अपने निज गुणों (प्रेम, आनन्द, शान्ति) में पुनः पूर्ण रूप से स्थिर हो जाय। मनुष्य अपने पुराने पापों को अर्थात् विकारी संस्कारों को उस ईश्वरीय स्नेह सम्बन्ध की अग्नि अथवा योगाग्नि में

भस्म करके, पूर्ण पवित्र बन मर्यादा पुरुषोत्तम रूप में इस सृष्टि में वास करे और समाज में व्यवहार करे। इस प्रकार का अध्यात्म ही समाज की सच्ची सेवा कर सकता है और आज संसार को इस समाजसेवी अध्यात्म की कितनी न आवश्यकता है। परन्तु इसको व्यापक रूप में लाने के लिए अब एक आध्यात्मिक क्रान्ति की आवश्यकता है जो धार्मिक मान्यताओं और रूढ़िवादी परम्पराओं को एक नई दिशा देकर व्यक्ति और समाज को सुन्दर, सुदृढ़, शान्तिमय और सुखमय बनाये।

### आध्यात्मिक क्रान्ति

आध्यात्मिक क्रान्ति की आज जितनी अधिक आवश्यकता है उतना ही वर्तमान युग इस क्रान्ति के सफल संचालन के लिये उपयुक्त है। इस वैज्ञानिक युग का मनुष्य प्रकृति के गहनतम रहस्यों को अनुभव और तर्क के आधार पर समझने का अभ्यासी हो गया है। उसमें नवीन विचारधारा पाने की जिज्ञासा है। वह रूढ़िवादी विचारों, अन्धविश्वासों, घिसी-पिटी परम्पराओं और असंगत मान्यताओं से ऊबा हुआ है। धर्म के आधार पर मानव समाज का बँटवारा भी उसे खलने लगा है। इसलिये वह इनमें क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहता है। परन्तु वह केवल परिवर्तन चाहता है। अध्यात्म की महत्ता में अब भी उसकी आस्था है। आज के विश्व की भीषण समस्याओं के मझधार में अध्यात्म ही उसका अन्तिम सहारा है। यही कारण है कि विज्ञान और तकनीक की प्रगति के शिखर पर पहुँचे हुए पाश्चात्य देश भारत की प्राचीन आध्यात्मिक गौरव को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। परन्तु सच्चा ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग आज अतीत की गोद में प्राय: लोप हो गया है, विस्मृति के गर्भ में छिप गया है। उसे पुन: सतह पर लाना है, पुनर्जीवित करना है, मानव मानस में उसकी धारा पुन: सतह पर लाना

है, पुनर्जीवित करना है, मानव में उसकी धारा पुनः प्रवाहित करना है, राजा सगर के मूर्छित पुत्रों को ज्ञान-गंगा की ज्ञान-धारा से चैतन्यता प्रदान करना है और अज्ञान निद्रा में सोये हुए करोड़ों कुम्भकर्णों को जगाना है।

वर्तमान समय आध्यात्मिक क्रान्ति की सफलता में जहाँ मनुष्यमात्र की आवश्यकता और आवश्यकता जनित आकांक्षा सहायक है वहाँ ही इसके गुह्यतम रहस्यों को समझने में वैज्ञानिक ज्ञान सहायक है। आध्यात्मिक तथ्यों के विश्लेषण के क्रम में जो एक विशेष रहस्योद्घाटन होना है वह यह कि भौतिक तथ्य और आध्यात्मिक तथ्य अपने अन्तिम स्वरूप में एक ही हैं। आज का नाभिकीय भौतिकी जिस सूक्ष्म जगत का उद्घाटन कर रहा है प्राथमिक कणों की क्रिया और प्रक्रिया परखने लगा है, सूक्ष्मातिसूक्ष्म तथ्यों को जानने और परखने की शक्ति उसमें आ रही है, उस आधार पर उसे यह समझने में अधिक कठिनाई न होनी चाहिए कि मनुष्य के भीतर विचारों और भावनाओं को अवशोषित और उत्सर्जित करने वाला एक 'कण' है जिसे ही आत्मा शब्द से सम्बोधित किया जाता है। ध्यान रहे कि यह 'आत्म-कण' मनुष्य का मस्तिष्क (brain) नहीं बल्कि इससे भिन्न है। मस्तिष्क तो केवल स्मृति (memory) का काम करता है। विवेक और भावना (discretion and emotion) का गुण मस्तिष्क में नहीं बल्कि 'आत्मा' में है। आज के विज्ञान को यह बात भी समझने और स्वीकार करने में कठिनाई न होगी कि परमात्मा भी इन्हीं गुणों से युक्त परन्तु अधिक शक्तिशाली कण है। आत्मा और परमात्मा के मध्य 'योग' क्रिया में विचारों का ही संचालन होता है जिस संचालन से मनुष्य की विचारधारा को नई दिशा मिलती है। जितना-जितना भौतिक विज्ञान 'विचार तरंगों के मुक्त प्रवाह को समझने और इन्हें नियन्त्रित करने में

सफल होता जावेगा उतना-उतना वह अध्यात्म के निकट पहुँचता जावेगा। तो आज विज्ञान ने वह सभी परिस्थितियाँ प्रस्तुत कर दी हैं जिनसे आध्यात्मिक तथ्यों का विवेकपूर्ण विश्लेषण हो सके। व्यापक संचार व्यवस्था (mass medias of communications) भी इतने तीव्र हैं कि किसी भी नवीन विचारधारा को संसार के कोने-कोने में जन-जन तक पहुँचाने में कोई समय न लगे। ऐसी स्थिति में क्रान्ति की एक लहर की आवश्यकता है। वास्तव में वह लहर चल भी चुकी है। उसने संसार को परिवर्तित करने का बीड़ा भी उठा रखा है, केवल उसका रूप अभी व्यापक होना शेष है। उस क्रान्ति की सफलता के पश्चात् यह संसार सभी समस्याओं से मुक्त होगा। दु:ख, अशान्ति और अभाव देखने को नहीं मिलेगा। कलह, क्लेश, वैमनस्यता से वह संसार पूर्ण अनभिज्ञ होगा। पूरे विश्व में एक भाषा, एक धर्म और एक राज्य होगा। अध्यात्म का यह स्वरूप समाज की एक ही बार ऐसी सेवा करता है कि फिर किसी और सेवा की आवश्यकता ही शेष नहीं रहती। इस संदर्भ में फ्रॉन्स के प्रसिद्ध लेखक और भविष्य-वक्ता जुल वर्न की यह भविष्य वाणी उद्धृत करना उचित ही होगा कि — 'सन् २००० तक एक धार्मिक क्रान्ति उठ खड़ी होगी जो ईश्वर और आत्मा के नये-नये रहस्य प्रकट करेगी जिनकी पुष्टि विज्ञान करेगा।' इसके फलस्वरूप लोगों में आस्तिकता, न्याय, नीति, अनुशासन और कर्त्तव्य-परायणता के भाव उगते चले जावेंगे।

# संसार उन्नति की ओर जा रहा है या अवनति और विज्ञान की ओर

आज हम देखते हैं कि विज्ञान के आविष्कारों से संसार में दिनोंदिन बहुत ही तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं। नित्य नई सुविधाजनक वस्तुएं बनाई जा रही हैं और ऐसे-ऐसे यन्त्र तथा साधन जुटाये जा रहे हैं कि पहले यदि किसी कार्य को दिनों और महीनों में और कठिनाई से किया जा सकता था तो आज उस कार्य को नये साधनों से घण्टों और मिनटों में बहुत ही सहज रीति से कर लिया जाता है। विज्ञान ने दैनिक जीवन के लिए भी बहुत-सी उपयोगी चीज़ें मनुष्य को दी हैं और परिणामत: मनुष्य का रहन-सहन और खान-पान का तरीका भी काफी बदल गया है और घर-मुहल्ले, ग्राम-नगर, सबका रंग-ढंग बदल गया है। आज टोंटी घुमाने मात्र से ही जल मनुष्य की सेवा में उपस्थित हो जाता है, बिजली का बटन दबाने से अग्नि प्रकट हो जाती है अथवा पवन मनुष्य को पंखा करने लग जाता है या विद्युत प्रकाश मनुष्य की नौकरी में उपस्थित होकर कल-कारखानों को तीव्र गति से चलाने के कार्य में लग जाता है। मनुष्य के आने-जाने के लिए बैल-गाड़ियों के स्थान पर आज शीघ्र-गामी मोटरें, बसें, रेलगाड़ियाँ और जहाज बन चुके हैं और अन्तरिक्ष यानों (Space-Ships) तथा राकेटों द्वारा मनुष्य चाँद तक पहुँचने में सफल हो गया है। इन तथा इन जैसे अन्य साधनों को तथा सुविधाओं को देखकर आज कई लोग मानते हैं कि संसार तरक्की कर रहा है, वह उन्नति के शिखर पर जा रहा है। परन्तु क्या यह सच है कि संसार उन्नति कर रहा है?

### आज के संसार की हालत पर गहराई से विचार

**गहराई से देखने पर मनुष्य इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि एक ओर तो**

**विज्ञान ने मनुष्य को मशीनें देकर उसकी उत्पादन-क्षमता को बढ़ा दिया है और कार्य को सहज बना दिया है परन्तु दूसरी ओर मनुष्य का हृदय मशीन की तरह कठोर हो गया है। मनुष्य के मन से दया, सहृदयता और करूणा की भावना उठ गई है। यद्यपि आज विज्ञान ने खेती के लिए मनुष्य को ट्रेक्टर (Tractor) आदि यन्त्र दिये हैं परन्तु सम्पन्न देशों की निर्दयता और स्वार्थपरता का यह हाल है कि आज संसार में आधे से ज्यादा लोगों को दो वक्त पेट-भर खाना नहीं मिलता और पूँजीपति लोग करोड़ों रुपये इकट्ठे करने के बाद भी अपने कारखानों में कार्य करने वाले मज़दूरों की हालत पर दया नहीं करते। आज विज्ञान ने मनुष्य को मोटरें, रेल-गाड़ियाँ, विमान आदि साधन देकर उसकी रफ्तार को तेज तो कर दिया है परन्तु इन साधनों से उसका जीवन बहुत ही व्यस्त और चिन्ता-ग्रस्त हो गया है और उसके जीवन में झंझट बढ़ ही गये हैं। हम देखते हैं कि कहीं पानी को बाँधकर मनुष्य ने बिजली तो पैदा की है और कहीं पहाड़ को काट कर रास्ता भी बनाया है परन्तु यह सब करके उसने सब सन्तुलन बिगाड़ दिया है और कल-पुर्ज़ों से कलकल अथवा कलह-क्लेश बढ़ाकर अपनी नींद भी हराम कर दी है और संसार में कृत्रिमता (Artificiality) ही की वृद्धि की है।**

आज विज्ञान ने मनुष्य को अनेक ऐसे यन्त्र तो दिये हैं जिनसे वह सब्जी और फलों को कई दिनों तक ताज़ा हालत में रख सकता है, सुगमता से आग जला सकता है, शरद ऋतु में कमरे को गरम रख सकता है, स्नान के लिए झट पानी को गरम या ठण्डा कर सकता है, स्विच दबाने से दूर-दूर के समाचार सुन सकता है, परन्तु हम देखते हैं कि इन सभी के बावजूद उसे तृप्ति नहीं हुई, बल्कि उसकी वासना और विलासता बढ़ी ही है। इस भोग-सामग्री से वह अधिक भोगी ही बना है, उसका मन निज स्वरूप से और परमपिता परमात्मा से तो दूर ही होता गया है। उसका ध्यान ईश्वर से हटकर और इच्छाओं में ही

लगता गया है जो कि कभी पूर्ण होने वाली नहीं हैं।

आज मनुष्य ने मोटर-कार और टेलीफोन को, ट्रांजिस्टर या टेलीविज़न आदि-आदि को उच्च जीवन-स्तर (Status) का सूचक मान लिया है और वह इन साधनों को जुटाने के लिए रिश्वत, मिलावट, बेईमानी, आदि हर अनुचित रीति को अपनाता है, आत्मा की आवाज को दबाता है और दूसरों की लूटखसूट में लगा रहता है। इस प्रकार उसमें अधर्म, अनाचार, भ्रष्टाचार, व्यभिचार आदि बढ़ा ही है और उसके फलस्वरूप वह सच्चे सुख से दूर ही हुआ है। वह साधनों का दास हो गया है। वह अपनी स्वतन्त्रता को खो बैठा है और चरित्र रूपी अतुल सम्पत्ति को, योग के आनन्द रूपी अनमोल खज़ाने को गँवा बैठा है और एक शराबी की तरह थोड़े समय के लिए नाली में पड़ा हुआ मस्ती मना रहा है।

**विज्ञान ने मनुष्य को बुद्धि का विकास तो दिया है परन्तु बुद्धि की दिव्यता छीन ली है। उसने मनुष्य को बिजली और अणु शक्ति तो दी है परन्तु उससे आत्मिक शक्ति ले ली है। उसने साधन तो जुटाए हैं परन्तु आध्यात्मिक साधना को मिटा दिया है। उसने कर्म में यांत्रिक कुशलता तो लाई है परन्तु धार्मिक कुशलता को नष्ट किया है। उसने अन्ध-श्रद्धा को तो मिटाया है परन्तु मनुष्य को गोला और बारूद देकर आतंक और अत्याचार को बढ़ाया है, अविश्वास को उपजाया है तथा भय को बढ़ाया है। उसने जीवन की समस्याओं की ओर मनुष्य का ध्यान तो खिंचवाया है परन्तु उन समस्याओं का जो वास्तविक हल है, अर्थात् पवित्र आचरण और परमात्मा की स्मृति रूपी जो एकमात्र समाधान है, उससे उसका ध्यान हटाया है। अतः सोचने की बात है कि मनुष्य को लाभ हुआ है या हानि हुई है, वह उन्नति के शिखर पर चढ़ा है या गिरावट की अंतिम सीमा तक पहुँचा है!**

## संसार की वर्तमान दशा की – रावण-राज्य की दशा से तुलना

एक आम मान्यता है कि रावण-राज्य में भी सभी सुविधाएं उपलब्ध थीं। उसकी लंका नगरी सोने की थी। सभी प्रकार की विद्याएं अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँच चुकी थीं। विमानों का प्रयोग होता था और अनेक प्रकार के बाण भी युद्ध में प्रयोग किए जाते थे। वरुण, पवन, अग्नि आदि रावण की चारपाई के पायों से बंधे हुए थे। वरूण पानी भर लाता था, पवन पंखा करता था, कोई कठिनाई न थी। कहते हैं कि मनुष्य ने रावण राज्य में सब-कुछ अपने हाथ कर लिया था परन्तु केवल दो शक्तियाँ उसे प्राप्त न थीं — एक तो यह कि उसमें लोहे को सोना बनाने की शक्ति नहीं थी और दूसरा उसके पास कोई ऐसी सीढ़ी अभी तक नहीं बनी थी कि जिससे जन-समूह चाँद तक पहुँच सके। उसके राज्य में बाकी सब-कुछ था, उस सब भोग-सामग्री के साथ 'काम' भी था और क्रोध भी, आलस्य भी और हठ तथा ज़िद्द भी, ईश्वर-विमुखता भी थी और प्रभु का विरोध भी, अंत: सभी जानते हैं कि उसका परिणाम क्या हुआ! उस भौतिक उन्नति का अन्त कैसा रहा! सब सुख-सामग्री होते हुए भी वे 'असुर' कहलाए और वह राज्य 'रावण राज्य' (रुलाने वाला राज्य) कहलाया और आखिर उस सभ्यता, संस्कृति या समाज का विध्वंस और विनाश ही तो हुआ। हम देखते हैं कि ठीक वैसे ही हालत आज के समाज की या सभ्यता की है।

आज भी मनुष्य के पास सब-कुछ है, उसने पवन, अग्नि, वरुण (जल) आदि को एक प्रकार से वश कर लिया हुआ है और अमरीका आदि में सोने की भी कोई कमी नहीं है। आज भी यही कमी रह गई है कि मनुष्य जन-जन को ''चाँद तक पहुँचने की सीढ़ी'' नहीं बना

सका यद्यपि उसके लिए भी वह प्रयत्न कर रहा है। आज भी संसार में सब-कुछ है परन्तु एक चरित्र, दिव्य बुद्धि अथवा धर्म नहीं है। मनुष्य ईश्वर से विमुख है अथवा विपरीत बुद्धिवाला है। अत: आज के संसार को रावणीय संसार कहना अतिशयोक्ति नहीं है बल्कि यथार्थ वर्णन एवं सत्य-निरूपण है। ऐसे संसार की क्या गति होगी, उसका क्या हाल होगा, इस तुलना द्वारा अब सहज ही इसका निर्णय हो सकता है। यह उन्नति के शिखर पर है या अवनति के गर्त में गिरा हुआ, यह अब दिखाई दे रहा है। आज इस संसार में सब-कुछ होते हुए भी मानो कुछ नहीं है क्योंकि इसमें एक चरित्र नहीं है और ईश्वर-निष्ठता नहीं है और उसके न होने से इस विपरीत-बुद्धि वाले समाज का विनाश अवश्यम्भावी है।

### चरित्र के बिना सब सुख थोथा है और काक-विष्ठा के समान है

कई लोग सोचते हैं कि चरित्र नहीं हुआ तो क्या बात है, बाकी सब-कुछ तो है। इस प्रकार वे चरित्र को ''एक चीज'' मानकर उसके मूल्य को कम कर देते हैं। परन्तु वह एक चीज कितने महत्व की है और बुनियादी है, इस बात पर किसी का यथोचित ध्यान नहीं जाता। इस विषय में मुझे एक लेखक की कुछ पंक्तियाँ याद हो आई हैं। लेख में बताया गया था कि एक बार एक युद्ध में एक योद्धा के घोड़े के नाल से एक कील निकल गया और वह नाल लटकने लग गया। उससे घोड़े को बहुत कठिनाई हुई और सवार को उतरना पड़ा। आखिर युद्ध में उस योद्धा के पक्ष की हार हुई थी। लेखक ने आगे यह सारा कुछ वर्णन करके अन्त में ऐसा लिखा था कि — "For the want of a nail, a horse was lost. For the want of a horse, the

rider was lost. For the want of a rider the battle was lost. For the want of the soldier, the country was lost. For the want of a nail all this was lost!" अर्थात् घोड़े के नाल का कील निकल जाने के कारण एक घोड़ा बेकार हो गया और उसकी कमी के कारण एक घोड़े-सवार योद्धा बेकार हो गया। उसकी कमी के कारण लड़ाई में उस योद्धा के पक्ष की हार हो गई और हार के कारण देशवासियों से देश का राज्य छिन गया। एक कील की कमी के कारण ही यह इतनी सारी हानि हुई।'' ठीक इसी प्रकार, आज एक चरित्र अथवा सत्य धर्म अथवा ईश्वर-निष्ठा न होने के कारण विज्ञान द्वारा प्राप्त किये सभी साधन बेकार हैं और यह सब सुख थोथे हैं। इनके होते हुए भी मनुष्य चिन्तित और दु:खी है और उसकी आत्मा को सच्ची शान्ति प्राप्त नहीं है।

इसकी भेंट में सतयुग में अपार सुख था क्योंकि तब न केवल मनुष्य के पास अतुल सम्पत्ति थी बल्कि चरित्र रूपी धन भी था। तब न केवल विज्ञान द्वारा प्राप्त साधन मौजूद थे बल्कि मनुष्य की बुद्धि दिव्य थी जो कि विज्ञान को रचनात्मक (Constructive) तथा अहिंसात्मक कार्यों ही में लगाती थी। तब मनुष्य वस्तुओं और साधनों के वशीभूत न था बल्कि वे उसके वश में थे। अत: जैसे उत्तम स्वभाव वाले वह लोग थे वैसा ही उनका प्रभाव प्रकृति पर था और वैसा ही उत्तम सुख उन्हें प्राप्त था। विमान तब भी थे परन्तु तब लोग बे-ईमान न थे। बिजली तब भी थी परन्तु तब मनुष्य की बुद्धि में वह खुजली न थी कि जिससे उत्तेजित होकर मनुष्य विध्वंस और विनाश कर डालता है अर्थात् उसमें क्रोध, आवेश, घृणा या ईर्ष्या न थी। अत: वह दिन बहुत ही सुहावने थे, वह सुख सच्चा था!

संसार के इस वास्तविक इतिहास को अथवा उन्नति और अवनति

की इस अद्‌भुत कहानी को जानकर अब हमें इससे एक अविस्मरणीय शिक्षा लेनी चाहिए। अब जबकि कलियुग जा रहा है और सतयुग आ रहा है तो हमें विज्ञान को सुखदायक बनाने के लिए ज्ञान लेना चाहिए। अब हमें गँवाई हुई पवित्रता को फिर से प्राप्त करने का पूरा पुरुषार्थ करना चाहिए। हमने चारित्रिक अवनति से विज्ञान द्वारा जिस संसार को नरक बना दिया है उसे अब चरित्र बल द्वारा स्वर्ग बनाने के कार्य में लग जाना चाहिए। अब हमें परमपिता परमात्मा के प्रति प्रीति बुद्धि वाला होकर राम-राज्य की स्थापना करनी चाहिए वरना इस रावण-राज्य के होने वाले विनाश के पहले यदि हमारे विकर्मों का विनाश न हुआ तो हमें निराशा ही का सामना करना पड़ेगा!

# मनुष्य चन्द्रमा तक कैसे पहुँचा? चाँद के बारे में विचित्र मान्यताएं

कुछ वर्ष पूर्व तक चाँद को मनुष्य की पहुँच से बाहर समझा जाता था। परन्तु २० जुलाई सन् १९६९ को अमरीका के अन्तरिक्ष यात्री नील आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन ने चाँद की सतह पर कदम रख दिये और पृथ्वी की ओर लौटती बार वे चाँद की मिट्टी और चट्टान के कुछ नमूने भी अपने साथ लेते आये। चाँद पर मनुष्य के उतरने और वहाँ से आँखों देखा समाचार तथा छायाचित्र (Photos) लाने से ऐसे तथ्य मनुष्यमात्र के सामने आये हैं जिनसे कि बहुत-सी पौराणिक और शास्त्रीय मान्यताएं आज केवल गलत ही नहीं बल्कि उपहासजनक भी मालूम होती हैं। अन्यश्च, चाँद पर मनुष्य के पहुँचने से मनुष्य-मात्र के पुरुषार्थ के लिए भी कई लाभकारी निष्कर्ष हमारे सामने आते हैं। हम इन दोनों बातों का यहाँ बारी-बारी उल्लेख करेंगे।

### क्या चाँद कोई लोक है? क्या चाँद कोई देवता है?

पुराणों में चाँद के बारे में अनेकानेक कथाएं हैं। उनमें लिखा है कि जब देवताओं और असुरों ने मिलकर समुद्र-मंथन किया तब उस मंथन के फलस्वरूप अमृत कलश, ऐरावत हाथी और कल्प-वृक्ष आदि के साथ चन्द्रमा भी निकला। आगे लिखा है कि अमृत पीने के लिए सूर्य देवता और चन्द्रमा 'देवता' इकट्ठे बैठे थे कि राहू भी एक देवता का रूप धारण करके उनके बीच में आकर बैठा। चन्द्रमा और सूर्य ने राहू का भेद खोल दिया, इसलिए राहू की चन्द्रमा से दुश्मनी हो गयी; अत: राहू के कारण ही चन्द्रमा को ग्रहण लगता है अथवा चन्द्रमा की कलाएं कम होती हैं। देखिये तो आज के युग में यह कथा कैसे अजीब लगती है! सूर्य और चन्द्रमा को देवता मानकर अमृत पीने के लिए

बैठा बताना — ये कैसी विवेक-विरुद्ध एवं विज्ञान-विरुद्ध बातें हैं! श्रीमद्भागवत् को वैष्णव लोग 'पंचम् वेद' मानते हैं। देखिये तो इसमें भी ऐसी विचित्र कथाएं भरी हुई हैं!! भला कोई बता सकता है - कहाँ है वह समुद्र जहाँ से चाँद निकला और फिर चाँद पृथ्वी से ४,००,००० किलोमीटर ऊपर अपनी कक्षा में कैसे जा पहुँचा?

पुनश्च, यह जो लिखा हुआ है कि चन्द्रमा एक देवता है, जिसने दक्ष प्रजापति की २७ कन्याओं से विवाह किया और कि दक्ष प्रजापति ने चन्द्रमा को शाप दिया जिसके परिणामस्वरूप चन्द्रमा की प्रति दिन एक कला कम होती है, क्या यह उपहास-जनक बात नहीं है? अभी जो यात्री चन्द्रमा पर गये थे, उन्होने तो वहाँ दक्ष प्रजापति की २७ कन्याएं, रोहिणी आदि नहीं देखीं, न उन्होंने सूर्य देवता को चन्द्रमा देवता के निकट बैठा पाया।

आपको आश्चर्य होगा कि श्रीमद्भागवत् आदि ग्रन्थों में तो लिखा है कि चन्द्रमा से नीचे और पृथ्वी से ऊपर बीच में जो अन्तरिक्ष लोक है, वहाँ यक्ष, राक्षस और पिशाचों आदि का स्थान है* और उससे भी ऊपर चाँद से थोड़ा नीचे सिद्ध, विद्याधर और चारण आदि का स्थान* है परन्तु अन्तरिक्ष यात्रियों ने तो चाँद की ओर जाते समय रास्ते में कोई यक्ष, राक्षस या सिद्ध देखे ही नहीं। हाँ, आर्म-स्ट्रांग और एल्ड्रिन को 'सिद्ध' भी कहा जा सकता है और 'चारण' भी क्योंकि सिद्ध अथवा सफलता प्राप्त करके वे वहाँ विचरते रहे। तो देखिये, शास्त्र-कारों ने अन्तरिक्ष 'लोक' आदि-आदि नामों से अनेक मनगढ़न्त 'लोक' बताये और उनमें राक्षस, यक्ष, सिद्ध आदि मनगढ़न्त ही वासी बताये हैं।

---

* *श्रीमद्भागवत्, पाँचवा स्कन्ध, तीसरा अध्याय*

* *श्रीमद्भागवत्, स्कन्ध ५, अध्याय २२*

स्वयं चाँद को श्री श्रीमद्भागवत् आदि ग्रन्थों में तथा वेदों-शास्त्रों में एक 'लोक' बताया गया है। किन्तु आज यह भेद सभी पर खुल गया है कि चाँद में कोई आबादी नहीं है बल्कि वह एक निर्जन ग्रह है। चीन में एक पुरानी दन्तकथा चली आती थी कि चीन की एक महिला ४००० वर्ष पहले चाँद में गई थी और आज भी वहाँ है और उसके साथ एक गिलहरी भी है और यह दोनों दिखाई देती हैं। आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन को अमरीका में चाँद-यान के ग्राउण्ड कन्ट्रोल के संचालकों ने संदेश दिया कि-''भाई ज़रा उस चीनी महिला का भी पता करना।'' आर्मस्ट्रांग ने हँसी से कहा — हाँ भाई, अवश्य पता करेंगे, परन्तु वह तो कहीं दिखाई नहीं देती।'' इन सभी वृत्तांतों से क्या यह सिद्ध नहीं होता कि चाँद कोई लोक नहीं है? तब क्या वेद-शास्त्रों की यह मान्यता कि चन्द्रमा एक लोक है, ग़लत नहीं है? अत: जो शास्त्र एक ओर तो कहते हैं कि उनमें लिखित ज्ञान त्रिलोकीनाथ परमात्मा ने दिया है और दूसरी ओर उनमें चन्द्रमा आदि का उल्लेख अब ग़लत सिद्ध हो गया है, क्या ऐसे शास्त्रों के 'ज्ञान' को ईश्वर-प्रदत्त मानना ठीक है?

शास्त्रों में तो 'चन्द्रमा सालोक्य को अर्थात् किसी आत्मा के चन्द्रमा में जाने को 'स्वर्ग-प्राप्ति' माना गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि चन्द्रमा को भी स्वर्ग लोक में ही स्थित माना गया है। अत: २० जुलाई को जब आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन चन्द्रमा में जा पहुँचे अर्थात् 'चन्द्रमा सालोक्य' को प्राप्त हुए, तो क्या हम यह कहें कि वे 'स्वर्गवासी' हुए? पहले तो हम भारतवासी किसी के मरने पर ही कहा करते थे कि — 'फलाँ व्यक्ति स्वर्गवासी हुआ,' परन्तु आज तो जीते-जागते, सूटिड-बूटिड (Suited-Booted) लोग इस पृथ्वी से खाना लेकर स्वर्गवासी हो जाते हैं!

फिर पुराणों-शास्त्रों में तो शंकर जी की जटाओं को चन्द्रमा से सुसज्जित दिखाया गया है और शंकर जी को 'चन्द्रमौलीश्वर,' चन्द्र-शेखर, चन्द्रचूड़ामणि आदि नामों से याद किया गया है। भला शंकर की जटाओं को अलंकृत करने वाले चन्द्रमा कौन-से हैं और क्या नील आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन उस शंकर जी वाले चन्द्रमा पर जा उतरे? यह कैसी अजीब बात है!

एक बात और देखिये। श्रीमद्भागवत् में तो लिखा है कि –'सूर्य की किरणों से एक लाख योजन ऊपर चन्द्रमा है*। किंचित सोचिये कि यह कितनी थोथी बात है! शायद चन्द्रमा को छोटा देखकर अथवा उसके प्रकाश को शीतल अनुभव करके ऐसा समझा गया होगा कि चन्द्रमा सूर्य से भी परे है।

इन सभी शास्त्रीय एवं पौराणिक उल्लेखों अथवा पुरानी मान्यताओं पर आप विचार करने के बाद निर्णय कीजिये कि –''जिन ग्रंथों में ऐसे अटपटे उल्लेख हैं, क्या उनमें वर्णित ज्ञान का स्त्रोत ''त्रिलोकी-नाथ'' परमात्मा को माना जा सकता है, और क्या इन ग्रंथों में त्रिलोकी का दिया गया वर्णन सही है या गलत?

अन्त में हम इस सन्दर्भ में 'ज्ञानामृत' मासिक के पूर्ववर्ती 'त्रिमूर्ति' मासिक के सन् १९५७-५८ के नवम्बर-दिसम्बर-जनवरी अंक के सम्पादकीय में दी हुई कुछ पंक्तियों का हवाला देना चाहेंगे। ये पंक्तियाँ आज से लगभग ४२ वर्ष पहले तब लिखी गयी थीं जब रूस ने अपना पहला स्पूतनिक (Sputnik) लाइका (Laika) ऊपर भेजा था। वे पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं :-

''.....गुह्य परमात्मीय विद्या के आधार पर हम जानते हैं कि

---

* *श्रीमद्भागवत् स्कन्ध ५, अध्याय २२*

वैज्ञानिक लोग जिस उद्देश्य से सूर्य और चन्द्रमा में पहुँचने के प्रयत्न कर रहे हैं, वह सब निष्फल होंगे क्योंकि सूर्य और चाँद तो मानो इस सृष्टि रूपी नाटकशाला की बत्तियाँ अर्थात् प्रकाश-दीप हैं, उनमें कोई लोक नहीं बसा है। और इस सृष्टि रूपी लीला की भावी ऐसी बनी हुई है कि वे वहाँ पहुँचेंगे तो उसके निकट भविष्य में ही सृष्टि का महाविनाश हो जाएगा।''.....(आपको मालूम रहे कि उन दिनों रूस ने कहा था कि लाइका को ऊपर भेजना विश्व-शान्ति की ओर एक कदम है परन्तु आप जानते हैं कि आज चाँद पर पहुँचने के बाद विश्व-शान्ति का उद्देश्य पूरा नहीं हुआ)। इन पंक्तियों में यह जो बात लिखी है कि चाँद में कोई लोक नहीं बसा है, यह तो आज सिद्ध हो चुका है, अब निकट भविष्य में महाविनाश की बात भी सामने आ जायेगी। उसके लिए जो ऐटम और हाइड्रोजन बम आदि साधन बने हैं, उनका तो सभी को पता है ही। हमने तो इन दोनों बातों की पूर्व घोषणा परमपिता परमात्मा शिव से प्राप्त हुए दिव्य दृष्टि के आधार पर की थी जो दृष्टि यहाँ अनेक ब्रह्माकुमारी बहनों को प्राप्त है। वे योग-स्थित होकर ध्यान-अवस्था में जो देखती हैं, उसके आधार पर हमने उपरोक्त उल्लेख किया था। हम फिर भी दोहरा कर कहते हैं कि सूर्य और चाँद तो इस सृष्टि के रात-दिन, ऋतु-परिवर्तन, प्रकृति एवं दृश्य-परिवर्तन आदि-आदि के साधन हैं परन्तु इनमें कोई लोक नहीं बसा है।

## चन्द्रमा ग्रह की पूजा

चन्द्रमा के बारे में एक विनोदपूर्ण बात और भी है। शताब्दियों से भारत के लोग किसी कार्य को आरम्भ करते समय ग्रहों की शान्ति के लिए तथा उनकी शुभ दृष्टि के लिए उनकी पूजा करते आये हैं। उन नव पूज्य ग्रहों में चाँद की भी गणना होती रही है। परन्तु अब जबकि

चन्द्रमा पर आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन ने बूटों (Boots) से ढके अपने पाँव रखे तो यह एक विवाद का विषय बन गया है कि अब चाँद की पूजा होनी चाहिए या नहीं? आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन तो मासांहारी, मदिरा पीने वाले तथा काम-क्रोध में पड़े हुए संसारी व्यक्ति हैं, जिन्हें पंडित लोग 'म्लेच्छ' 'असुर' या 'अशुद्ध' मानेंगे। जब ऐसे व्यक्ति 'देवता'पर अथवा चन्द्रमा ग्रह पर जूते पहन कर उतरे और न जाने किन-किन अशुद्ध धातुओं की क्या-क्या वस्तु वहाँ छोड़ आये (अमरीका आदि देशों के झण्डे भी वहाँ लगा आये और शायद कोई लघु शंका आदि भी कर आये) तो क्या अब चन्द्रमा पूजा के योग्य रहा? पूजा तो सदा पवित्र एवं स्वच्छ व्यक्ति अथवा वस्तु की होती है। परन्तु आपको आश्चर्य होगा कि अब भी कई पंडितों का कहना है कि चन्द्रमा ग्रह की पूजा वैसे ही होगी। (इस सिलसिले में दैनिक नवभारत टाइम्स का २९ जुलाई १९६८ का देहली संस्करण देखिये) किंचित सोचिये कि अभी भी लोग चन्द्रमा देवता की पूजा छोड़ने को तैयार नहीं हैं। वे एक परमपिता परमात्मा से कितने विमुख हो चुके हैं और कितने हठधर्मी हैं!

### मनुष्य चन्द्रमा तक कैसे पहुँचे?

अब हम किंचित इस बात की चर्चा करेंगे कि मनुष्य चन्द्रमा तक कैसे पहुँचे? आप कहेंगे कि यह तो सर्व-विदित बात है कि वे विज्ञान-बल के आधार पर चाँद तक पहुँचने में सफल हुए। यह उत्तर तो ठीक है परन्तु आप अधिक गहराई से सोचेंगे तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि इतना विज्ञान-बल भी उन्हें जो प्राप्त हुआ वह भी किसी और आधार पर टिका हुआ है। वैज्ञानिक भी ऐसे चमत्कारी अनुसन्धान करने में इसलिए सफल हुए कि वे मन की एकाग्रता, उत्साह, उमंग और

संगठन से कार्य में अथक होकर, आशावादी होकर लगे रहे। अत: यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि ये जो शक्तिशाली साधन बने हैं, इनका आधार भी मनुष्य के कुछ सद्‌गुण हैं जिन्हें 'एकाग्रता', 'उमंग', 'संगठन', 'आशावादिता', 'अथक पुरुषार्थ', आदि नाम दिये जाते हैं। जहाँ वैज्ञानिकों की इतनी बड़ी सफलता के कारण पूर्वोक्त सद्‌गुण हैं, वहाँ नील आर्मस्ट्रांग तथा एल्ड्रिन की सफलता का कारण उनमें साहस, निर्भयता, वीरता, पहल करने की हिम्मत (Spirit of adventure) आदि-आदि सद्‌गुण हैं। यदि वैज्ञानिकों में तथा चन्द्र यात्रियों में ये गुण न होते तो आज जो-कुछ उन्होंने कर दिखाया है, वह कभी न हो सकता।

उनके इन गुणों का यह फल है कि अमेरिका के तत्कालीन प्रधान (President) ने उनके चन्द्र-यात्रा पर जाने से पहले उनसे खाना खाने की चेष्टा प्रगट की। हालाँकि मिस्टर निक्सन दुनिया के सबसे अधिक धनवान तथा विकसित देश के प्रधान थे परन्तु आर्मस्ट्रांग और एल्ड्रिन जिन्होंने कि जान की बाज़ी लगाकर चन्द्र-यात्रा की, उनसे मिलने के लिए प्रधान महोदय ने भी इच्छा प्रगट की तथा सारी दुनिया ने समाचार-पत्रों में उनके करिश्मे का समाचार पढ़ा।

अमेरिका के प्रधान स्वयं भी तो किन्हीं गुणों के कारण ही संसार के सबसे अधिक शक्तिशाली राष्ट्र के प्रधान बन पाये। उनमें न केवल प्रशासन (Administration) की श्लाघ्य योग्यता है बल्कि लोगों को अपने विचारों से सहमत करने, उन्हें अपना बना लेने की भी कमाल की योग्यता है। तभी तो उन्हें लोगों का बहुमत प्राप्त हुआ।

तो कहने का भाव यह है कि गुणों के आधार पर ही मनुष्य किसी उच्च पद को प्राप्त करता है और उसे यश तथा सुख का लाभ होता है। परन्तु इस सृष्टि में किसी भी मनुष्य में सर्वगुण नहीं हैं और

निर्विकारिता अथवा मन-वचन-कर्म की पूर्ण पवित्रता तो किसी में भी नहीं है। अब परमपिता परमात्मा हमें जो ईश्वरीय ज्ञान और सहज राज-योग सिखा रहे हैं, उसका उद्देश्य हमें सर्व दैवी गुणों से सम्पन्न बनाना तथा सम्पूर्ण निर्विकारी बनाना है। काश, आज लोगों का ध्यान इन दैवी गुणों की ओर तथा परमपिता परमात्मा के इस कमाल के कार्य की ओर होता जिसके फलस्वरूप न केवल सूर्य तथा चाँद के पार के लोकों में जाना या उन्हें जानना सम्भव हो सकता है बल्कि यह पृथ्वी ही स्वर्ग अथवा देव भूमि बन सकती है और विश्व में शान्ति हो सकती है और हो रही है।

# क्या विज्ञान – ईश्वरीय ज्ञान का समर्थक और सहायक है या विरोधी और बाधक?

पिछले १५० वर्षों में विज्ञान ने आश्चर्यजनक प्रगति की है। विज्ञान ने बहुत-से ऐसे आविष्कार किये हैं जिनसे कि पिछले हज़ारों वर्षों की धार्मिक मान्यतायें ध्वस्त हो गई हैं। उदाहरण के तौर पर अन्तरिक्ष-यान द्वारा मनुष्य ने जब चाँद पर पग रख- कर वहाँ के बारे में यह समाचार दिया कि वह निर्ज़न स्थान है और वहाँ पर पानी भी नहीं है तो यह मान्यता भी धराशायी हो गई कि चाँद में स्वर्गलोक है, जहाँ देवी-देवता निवास करते हैं तथा मधु और दूध आदि-आदि की नदियाँ बहती हैं। बहुत पुराने काल से लगभग सभी धर्म-सम्प्रदाय यह मानते आ रहे थे कि चाँद में स्वर्ग है और वे इस मान्यता को प्रमाणिकता देने के लिए या तो कहते थे कि यह ज्ञान त्रिकालदर्शी एवं सर्वज्ञ परमात्मा ने वेद के रूप में दिया है या वे यह घोषणा करते रहे कि चाँद में स्वर्गलोक को पतंजलि आदि योगियों ने अथवा त्रिनेत्री ऋषियों ने देखा है। जैन लोग भी इसे अपने अर्हतों, सिद्धों, मुनियों आदि आप्त पुरुषों द्वारा प्राप्त सत्य मानते रहे हैं। इसी प्रकार अन्य लोग चाँद में स्वर्ग या हैवन (Heaven) का होना सत्य-दृष्टा (Seers, Oracles) द्वारा उद्घाटित सत्य मानते रहे हैं। अब अन्तरिक्ष यात्रा के बाद उनकी चन्द्रमा-विषयक – मान्यता के असत्य सिद्ध होने से तो उनके परमात्मा तथा योग विषयक सिद्धान्त भी ग़लत सिद्ध हो जाते हैं या यों कहें कि उनके सारे सिद्धान्त किसी अल्पज्ञ मानव द्वारा ही गढ़े हुए सिद्ध होते हैं। अत: चाँद-विषयक नये तथ्य जब मनुष्य-समाज के सामने आये तो बहुत-से धार्मिक नेताओं एवं आचार्यों ने बौखलाहट में आकर कुछ विचित्र बातें करनी शुरू की। किसी ने तो यह कहा कि अन्तरिक्ष-यात्री चाँद पर उतरे ही नहीं, किसी अन्य ने कहा कि शास्त्रों में जिस चाँद का वर्णन है, वह यह चाँद नहीं है बल्कि वह कोई और

चाँद है, अन्य किसी ने कह दिया कि देवता तो सूक्ष्म होते हैं, वे पाश्चात्य देशों से गये हुए अन्तरिक्ष यात्रियों को दिखाई ही नहीं दिये क्योंकि वे यात्री म्लेच्छ हैं अथवा राक्षसी वृत्तियों वाले हैं!

## वैज्ञानिक शोध द्वारा कुछ अन्य धार्मिक मान्यताओं पर चोट

ऐसे ही वैज्ञानिक शोध तथा आविष्कारों द्वारा कुछ और तथ्य मनुष्य के सामने आये हैं जिनके कारण पिछली कई धार्मिक मान्यतायें असत्य सिद्ध हुई हैं। परन्तु यहाँ 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय'में हम लोग जो ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं, उस द्वारा निर्दिष्ट सभी तथ्यों को वे प्रमाणित करती हैं। यहाँ उनमें से कुछेक का उल्लेख करना पर्याप्त होगा।

शरीर-विज्ञान और शिल्प-विद्या (Surgery) विशेषज्ञों ने पिछले कुछ वर्षों में हृदयारोपण (Heart-transplant) के भी तजुर्बे किये हैं। उन्होंने हृदय में मानवी वाल्व (Valve) हटाकर वहाँ प्लास्टिक के वाल्व भी लगाये हैं और कुछ समय तक यांत्रिक हृदय (Mechanical Heart) द्वारा भी मानवों को जिन्दा रखने में सफलता प्राप्त की है। विज्ञान के इन परीक्षणों तथा उपलब्धियों से धार्मिकों की चिरातीत से चली आई यह आस्था कि आत्मा हृदय रूपी गुहा में वास करती है, निराधार सिद्ध हो गई है। और तो क्या, गीता में यह जो वाक्य है कि -''मैं सब के हृदय में सन्निविष्ट हूँ'', यह भी एक क्षेपक प्रमाणित हो गया है और 'भ्रुवोर्मध्ये.....' इस श्लोक में भृकुटी के बीच में आत्मा का जो वास बताया गया मालूम होता है, वही वास्तविक और मौलिक प्रमाणित हो गया है। यदि अब भी कुछ लोग हृदय रूपी गुहा में आत्मा और उसके साथ परमात्मा का वास मानने पर हठ का अवलम्ब लिये हुए हैं तो यह उनका दुराग्रह ही है। स्वयं डाक्टरों ने कुछ समय पूर्व यह घोषणा की थी कि आत्मा मस्तक के

भाग में विराजमान है।

## परमात्मा की सर्व-व्यापकता का सिद्धान्त अब निराधार

पुनश्च, वैज्ञानिकों ने राकेट तथा अन्तरिक्ष-यानों (Space Ships) के प्रयोग से अन्तरिक्ष यात्रा में जो कल्पनातीत सफलता प्राप्त की है, उससे और कई तथ्य भी मनुष्य के सामने आये हैं। उदाहरण के तौर पर एक यह कि मनुष्य वेधशाला (Observatory) में या नियन्त्रणालय (Ground Control Room) में बैठकर भी भूमण्डल से दूर, सौरमण्डल में गये हुए यन्त्रों तथा यात्रियों को विद्युतीय-चुम्बकीय प्रसाधनों (Electro-Magnetic means of Control) द्वारा निर्देश (Direction) दे सकता है तथा वायरलैस, रेडियो, टेलीविज़न, टेलीफोटो आदि साधनों द्वारा उनसे बातचीत भी कर सकता है, उनके फोटो भी ले सकता तथा उन्हें देख भी सकता है। यन्त्रों को वह दूरस्थ भूमंडल से (Remote Ground Control) दिशा भी दे सकता है और उनकी चाल पर काबू भी रख सकता है, इससे धार्मिकों की यह मान्यता कि —''परमात्मा को सर्वव्यापक मानना इसलिए आवश्यक है कि यदि वह सब जगह व्यापक न हो तो वह सबको देख तथा जान नहीं सकता और उन्हें कर्मभोग भोगने के लिए बाध्य नहीं कर सकता''— मिथ्या तर्क पर आधारित और खोखली सिद्ध हो गई है। वैज्ञानिक लोग प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियों को साधकर करोड़ों मील दूर के विशालकाय यन्त्रों को वहाँ अपनी उपस्थिति के बिना तथा किसी स्थूल सम्पर्क के बिना जब कण्ट्रोल कर सकते और सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं तो क्या सर्वशक्तिवान, परम वैज्ञानिक परमात्मा, (यदि वह चाहे तो) परमधाम का वासी होते हुए भी मनुष्यों को 'यन्त्रारूढ़' व्यक्तियों की तरह देख या जान नहीं सकता? निश्चय ही विज्ञान द्वारा इन आविष्कारों से पहले की मनुष्यों की यह मान्यता कि परमात्मा सर्व-व्यापक है—

मनुष्य की अल्पज्ञता पर आधारित सिद्ध हुई है। यद्यपि उस पुरानी मान्यता की सिद्धि के लिए दिये गए तर्क ठीक जान पड़ते हैं परन्तु वास्तव में वे मिथ्या हैं। हेत्वाभास की बात उन पर ठीक घटती है।

### मन के बारे में माननीय तथ्य

इसी प्रकार, मनोवैज्ञानिक ने मन के जो तीन स्तर निश्चित रूप से माने हैं—मन की चेतन अवस्था (Conscious Level) अर्द्ध चेतन अवस्था (Sub-Conscious Level) या अचेत अवस्था (Unconscious Level) — इससे धार्मिकों की यह मान्यता कि मन प्रकृतिकृत है, चूर-चूर हो जाती है। वैज्ञानिकों ने मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों (Basic Instincts) तथा रुझान (Tendencies) के बारे में जो खोज की है उसके आधार पर वे कहते हैं कि यह प्रवृत्तियाँ अनन्त और अकथनीय काल से (अनादि काल से) मनुष्य में हैं। इससे इन प्रवृत्तियों का स्वयं आत्मा ही की प्रवृत्तियाँ होना सिद्ध होता है क्योंकि आत्मा ही अनादि सत्ता है जिसमें ये प्रवृत्तियाँ सुरक्षित हैं। प्रकृति तो क्षण-क्षण में बदलती है तथा शरीर तो नश्वर है। टेप रेकार्ड तथा ग्रामोफोन के उदाहरणों से स्पष्ट है कि यदि मन प्रकृतिकृत होता जिसमें कि जन्म-जन्मान्तर की स्मृतियाँ, कृतियाँ तथा प्रवृत्तियाँ सुरक्षित होतीं, तब तो आत्मा के जन्म-जन्मान्तर के रेकार्ड के लिए न जाने मन रूपी इलैक्ट्रोमैगनेटिक टेप या ग्रामोफोन रेकार्ड कितना बड़ा होना चाहिए था! वह शरीर में तो क्या शायद सारी पृथ्वी पर भी न समा सकता! पुनश्च, मन की तो चार विशेषतायें मानी गई हैं— ज्ञान-सम्बन्धी (Cognition), इच्छा-सम्बन्धी (Conation), क्रिया-सम्बन्धी (Action), आवेग-सम्बन्धी (Affection), जैसे कि प्रेम, शान्ति — इनसे भी सिद्ध होता है कि मन प्रकृतिकृत नहीं है, बल्कि चेतन आत्मा ही की स्वाभाविक योग्यताओं का उपनाम है। आवेग-सम्बन्धी (Emotion) मनोवैज्ञानिक शोध (Research) से यह भी सिद्ध है

कि लेप और विक्षेप आत्मा को ही लगता है और कि विकार मनुष्य के लिए शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक सन्तुलन के दृष्टिकोण से भी हानिकारक अथवा घातक हैं क्योंकि विकारों की उत्पत्ति से शरीर में कई ऐसे रस (Secretions) पैदा होते हैं जो रोगों को जन्म देते तथा अशान्ति पैदा करते हैं।

## कई पुराने दार्शनिक सिद्धान्त खण्डित

इस प्रकार, परमात्मा के स्वरूप (सर्व-व्यापक या एकदेशी होने) सम्बन्धी, आत्मा के अणु या विभु होने सम्बन्धी अथवा हृदय किंवा भृकुटि में वास करने सम्बन्धी, मन के प्रकृतिकृत होने या स्वयं आत्मा ही की कुछ अनादि क्षमतायें होने सम्बन्धी तथा स्वर्ग कहाँ है, कैसा है — एतद् विषयों-सम्बन्धी मान्यतायें निर्मूल एवं मिथ्या सिद्ध हो जाने से पुराने कई दार्शनिक सिद्धान्त उखड़ जाते हैं। दर्शनों में, जैसे कि वैशेषिक दर्शन में यह जो लिखा है कि अमुक-अमुक यज्ञ से स्वर्ग की प्राप्ति होती है, वह मान्यता स्वर्ग-सम्बन्धी मान्यता के ध्वस्त होने से अनावस्थित हो जाती है। उससे उन यज्ञों एवं कर्म-काण्डों से स्वर्ग की प्राप्ति की गारंटी विश्वसनीय नहीं रहती। इसी प्रकार, अमुक-अमुक यौगिक क्रिया से अथवा ध्यान विशेष से अमुक-अमुक लोक का ज्ञान मनुष्य को होता है— यह जो पतंजलि के योग दर्शन में लिखा है, उसको भी चंद्रमा-विषयक नई वैज्ञानिक खोज के द्वारा घातक चोट पहुँचती है जिससे कि यम-नियमों के शाश्वत सिद्धान्तों को छोड़कर अन्य सिद्धान्तों में लोगों की आस्था यथापूर्व बने रहना असम्भव हो गया है।

## विज्ञान से वास्तविक ज्ञान को कोई खतरा नहीं है

इधर 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय' में जो ईश्वरीय ज्ञान पिछले लगभग ६२ वर्षों से दिया जा रहा है, उसकी पुष्टि एवं

प्रमाणिकता इन वैज्ञानिक आविष्कारों द्वारा होती है—यह आध्यात्मवादी लोगों के लिए तथा सत्यान्वेषी जनों के लिए हर्ष की बात है।

कुछ लोग कहते हैं कि विज्ञान ने आध्यात्मवाद के अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। वास्तव में स्थिति ऐसी नहीं है। निःसंदेह विज्ञान ने रूढ़ी, कर्मकाण्ड, अन्धविश्वास, कथा, धार्मिक कल्पना (Mythology) तथा कमज़ोर साम्प्रदायिक मान्यताओं को तो कड़ी चोट की है परन्तु इससे मानव सजग हो गया है और अब वह विवेक का प्रयोग करने लगा है तथा 'सत्य वचन महाराज' की परिपाटी को छोड़कर, गहराई में जाने की चेष्टा करने लगा है। इससे विज्ञान ने सत्य ईश्वरीय ज्ञान, जोकि अपने में स्वयं एक बड़ा भारी विज्ञान है और प्रकृति-सम्बन्धी विज्ञानों से भी अधिक शक्तिशाली, सूक्ष्म एवं बड़ा है, के लिए रास्ता खोल दिया है।

वर्तमान समय विज्ञान ने जो कम्प्यूटर (Computer) तथा रोबोट (Robbot) का आविष्कार किया है, उनसे कई आध्यात्मवादी लोग आध्यात्मवाद के लिए खतरा पैदा हो गया मानते हैं। परन्तु वास्तव में उनका यह भय व्यर्थ है। यह बात ठीक है कि कम्प्यूटर रोबोट एक प्रकार के यांत्रिक मानव (Machine Man) हैं जिन्हें वैज्ञानिक एक मनुष्य की तरह ही सोचने, निर्णय करने तथा कार्य करने के लिए प्रयोग कर सकते हैं जैसे कि एक मानव को। परन्तु कम्प्यूटर तथा रोबोट में प्रेम, शान्ति, आनन्द, आवेग, पूर्व-स्मृति, संस्कार, सम्बन्धों का भान, मृत्यु से डर या अमरत्व एवं मुक्ति की इच्छा नहीं होती जैसे कि मानव में होती है। कम्प्यूटर या रोबोट कार्य तो करता है परन्तु उसमें कार्य करने की चेष्टा (प्रवृत्ति) या उससे निवृत्त होने की चेष्टा (निवृत्ति अथवा संन्यास) किसी के प्रति श्रद्धा या भावना आदि नहीं होती। अतः इन आविष्कारों से तो यह सिद्ध होता है कि मस्तिष्क (Brain) भी शरीर में एक प्रकार का लघु (Mini) कम्प्यूटर

(Computer) है अथवा मस्तिष्क, स्नायु-जाल (Nerves Net) एवं शरीर मिलकर आत्मा के लिये एक रोबोट (Robbot) है। इनसे कार्य लेने वाली अनुभवशील, चेष्टा-युक्त पुरुषार्थवान्, चेतन एवं अविनाशी आत्मा इनसे अलग है। अत: जो लोग अब तक आत्मा के अस्तित्व को न मानकर शरीर में मस्तिष्क, हृदय, स्नायु-क्रिया आदि-आदि को देखकर उसे स्वचालक सर्वस्व मानते चले आये हैं, उनके लिए अब ये आविष्कार एक चुनौती है क्योंकि ये सिद्ध करते हैं कि ये आत्मा के उपकरण हैं अर्थात् इनसे अलग एक चेतन भी है जिसे 'आत्मा' कहते हैं।

इस लेख का कलेवर छोटा-सा है। अत: इस छोटे-से लेख में सभी वैज्ञानिक आविष्कारों तथा निर्णयों की चर्चा आध्यात्मवाद को सामने रखकर करना सम्भव नहीं है। इन कुछेक उदाहरणों से ही केवल इस बात को सिद्ध करना अभीष्ट है कि विज्ञान ईश्वरीय ज्ञान को प्रमाणित करने में सहायक है। हाँ, जिन विषयों में अभी स्वयं विज्ञान भी बाल्यावस्था में है, उन विषयों में विज्ञान के निर्णय कुछ विपरीत हो सकते हैं। अन्यथा विज्ञान न केवल ईश्वरीय ज्ञान का परोक्ष या अपरोक्ष रीति से समर्थक है बल्कि ईश्वरीय ज्ञान द्वारा सतयुगी, सम्पूर्ण पवित्रता, सुख एवं शान्ति स्थापित करने की जो ईश्वरीय योजना है, उसमें भी विज्ञान इस तरह सहायक है कि उस द्वारा बनाये गये आणविक अस्त्रों के माध्यम से कुचेष्टाओं, दुर्व्यसनों, दुर्भावनाओं एवं दुराचारों वाली कलियुगी सृष्टि का महाविनाश होगा और सतयुगी देवी-देवताओं के पुनरागमन का रास्ता खुल जायेगा।

# परमात्मा क्या देता है और विज्ञान क्या देता है?

आज विज्ञान का युग है। प्रत्येक मनुष्य विज्ञान के चमत्कार को नमस्कार कर रहा है। विज्ञान ने मनुष्यों को सब प्रकार की सुविधायें दे दी हैं परन्तु फिर भी आज कोई तन से रोगी है तो कोई धन से दु:खी है और कोई प्रकृति के प्रकोपों से पीड़ित है। मनुष्य चाहता है—सब प्रकार के दु:खों से छुटकारा पाना। मनुष्य यह चाहता है मैं काम कम-से-कम करूँ और मुझे प्राप्ति अधिक से अधिक हो।

विज्ञान के युग कों 'कल का युग' अर्थात् 'मशीन का युग' भी कहा जाता है। विज्ञान ने आज चमड़ी के मनुष्यों से काम कराना बन्द कराके लोहे के पुरुषों (मशीनों) से काम कराना शुरू करा दिया है। परन्तु अब देखना यह है कि विज्ञान ने मनुष्य को सम्पूर्ण सुखी बनाया है या विज्ञान को सुखदाता कहा जा सकता है? विज्ञान आज इतनी उन्नति कर चुका है कि इसने विश्वव्यापी टेलीविजन दिया, टेलीस्कोप दिया, माइक्रोस्कोप बनाये, यहाँ तक कि चन्द्रमा तक भी विजय पायी। क्या इससे मनुष्य के जीवन का जो लक्ष्य (सम्पूर्ण सुख-शांति प्राप्त करना) है, वो पूर्ण हो चुका है? क्या विज्ञान से पूर्ण सत्य का दर्शन हो सकता है?

### विज्ञान क्या देता है, परमात्मा क्या देता है?

यद्यपि विज्ञान ने उन्नति तो बहुत की है, फिर भी विज्ञान की सीमा है। साइंस ऐटम को तोड़कर न्यूट्रोन, इलेक्ट्रोन और प्रोटोन तक पहुँची है परन्तु वह तो फिर भी जड़ वस्तु है, उससे भी सूक्ष्म-सत्ता—'आत्मा' है—जो कि चैतन्य शक्ति है, उसकी जानकारी परमात्मा देते हैं। आत्मा, मन, बुद्धि, संस्कार सहित है। जैसे साइंस की सूक्ष्मता में

शक्ति अधिक है, उसी प्रकार परमात्मा — 'आत्मा' की सूक्ष्म शक्तियों का ज्ञान देते हैं। विज्ञान से भौगोलिक परिस्थितियों का अथवा धरती की आयु का पता तो चलता है लेकिन सृष्टि के आदि, मध्य, अन्त का ज्ञान तो केवल परमात्मा ही देते हैं। **विज्ञान शरीर के अंग खराब हो जाने पर इलाज तो कर सकता है; आँख खराब हो गयी तो चश्मा बना दिया, कान बहरा हो गया तो सुनने का साधन बना दिया, यहाँ तक कि हृदयारोपन कर दिया परन्तु कोई अंग कभी खराब ही न हो, अर्थात् सदा-निरोगी, सदा-धनवान, सदा-सुखी (Ever-healthy, Ever-Wealthy, Ever-happy) कैसे बनें या 'अमर-पद' कैसे प्राप्त करें–यह ज्ञान परमात्मा ही देते हैं।**

अगर पूरी गहराई से देखा जाय तो वैज्ञानिकों ने कुछ विशेष कमाल का कार्य नहीं किया है। परमात्मा जो बात होने से पहले बताते हैं, वैज्ञानिक प्रयोगशाला में पहले प्रयोग करके देखता है और तब ही बता पाता है। कुछ लोग समझते हैं कि वैज्ञानिक आविष्कार करता है। वास्तव में वैज्ञानिक अपने संस्कारों की स्मृति के आधार पर ही नई खोज करता है, आविष्कार (Invention) नहीं क्योंकि आत्मा में वे संस्कार पहले से समाये होते हैं और समय आने पर कोई निमित्त कारण बन जाने से वैज्ञानिक के संस्कार पुन: उस खोज के लिये जागृत हो जाते हैं। विज्ञान के इतिहास से परिचित लोग जानते हैं कि एक व्यक्ति ने पानी उबलने से जब भाप की शक्ति का अनुभव किया, तब इंजन को बनाने का संकल्प किया। इसी प्रकार बिजली, टेलीफोन आदि की खोज हुई। परमात्मा सबसे बड़ा वैज्ञानिक है जो खोज नहीं करता बल्कि 'ज्ञान' देता है जबकि वैज्ञानिकों का सारा जीवन छोटी-सी खोज में समाप्त हो जाता है। वैज्ञानिक खोज करके उन्नति तो करते हैं, सुख-सुविधायें तो दे देते हैं परन्तु उनके द्वारा दिये साधनों से दु:ख स्थाई तौर पर दूर नहीं होते। लेकिन परमात्मा आध्यात्मिक ज्ञान से सब दु:खों

को दूर कर देते हैं।

### धर्म-ज्ञान भी एक प्रकार का विज्ञान

धर्म को भी 'साइन्स' कहा जाता है। जिस तरह से विज्ञान यह बतलाता है कि इस क्रिया (Action) की प्रतिक्रिया (Reaction) क्या होगी, उसी प्रकार से परमात्मा भी आध्यात्मिक जगत् के नियम बताते हैं। विज्ञान भौतिक जगत् तक सीमित है। ईश्वरीय ज्ञान आध्यात्मिकता की खोज है। जिस प्रकार विज्ञान के नियम हर मनुष्य और हर स्थान पर लागू होते हैं, इसी प्रकार ईश्वरीय विज्ञान के नियम हर स्थान पर और हर मनुष्य पर लागू होते हैं। जैसे कोई मनुष्य देह-अभिमान वश क्रोध करता है तो उसका परिणाम दु:ख अवश्य होता है, चाहे हिन्दू हो या मुस्लिम, सिक्ख हो या ईसाई—प्रत्येक व्यक्ति पर यह नियम लागू होता है। भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला में प्रयोग किया जाता है। आध्यात्मिक विज्ञान की प्रयोगशाला हमारा 'जीवन' है। भौतिक विज्ञान साकार सृष्टि तक सीमित है परन्तु परमात्मा तो साकार सृष्टि से पार, जो अखण्ड ज्योतिमय तत्व है, उसका भी अनुभव कराते हैं। जैसे टेलीविज़न के आविष्कार से इस दुनिया में हो रही घटनाएँ या सृष्टि का आँखों देखा अनुभव होता है, वैसे ही त्रिकालदर्शी परमात्मा भूत, वर्तमान और भविष्य — तीनों कालों का साक्षात्कार दिव्य-दृष्टि या दिव्य-बुद्धि द्वारा कराते हैं। क्या साइन्स इस बात का स्पष्टीकरण दे सकती है कि मीरा तथा चुड़ाला कैसे अन्त:वाहक शरीर लेकर सूक्ष्म पुरियों में जाती थीं? मीरा ने श्रीकृष्ण का साक्षात्कार किया, लेकिन मीरा के समय श्रीकृष्ण तो थे नहीं! दिव्य दृष्टि का वरदान स्वयं परमात्मा देते हैं, इसलिए उनको 'दिव्य-दृष्टि दाता' तथा 'दिव्य-बुद्धि विधाता' कहा जाता है। क्या विज्ञान इस बात का उत्तर दे सकता है कि

भिन्न-भिन्न मनुष्यात्माओं की भिन्न शारीरिक आकृति क्यों है? जबकि एक ही माँ-बाप के घर चार बच्चे पैदा होते हैं; एक ही फैक्ट्री में पैदा होने वाले चार खिलौनों का नमूना एक होना चाहिए। वास्तव में आध्यात्मिक विज्ञान द्वारा परमात्मा ही हमें बताते हैं कि किस प्रकार भिन्न-भिन्न संस्कारों वाली आत्मा भिन्न-भिन्न रूप, रंग आकार वाला शरीर धारण करती है। इसके अतिरिक्त, इतना सन्तति नियंत्रण (Birth Control) देते हुए भी जनसंख्या की इतनी वृद्धि क्यों? क्योंकि आत्माएं ब्रह्म महतत्व में निवास करती हैं और अपने समय पर सृष्टि रंगमंच पर पार्ट बजाने आती हैं। क्या साइन्स पुनर्जन्म (Rebirth) का ज्ञान दे सकती है? परमात्मा तो आत्मा के ८४ जन्मों की कहानी का ज्ञान सुनाते हैं।

### विज्ञान सम्पूर्ण और शाश्वत सुख नहीं दे सकता

यद्यपि विज्ञान ने आज उन्नति बहुत की है परन्तु वह हमको सम्पूर्ण सुख नहीं दे सकता क्योंकि वैज्ञानिक स्वयं सम्पूर्ण सुखी नहीं है। क्षुद्रबुद्धि आत्माओं की खोज में भी कुछ छिद्र अवश्य रह जाते हैं। सम्पूर्ण तो एक ही सबसे बड़ा वैज्ञानिक 'परमात्मा' है जो विज्ञान की भी सतोप्रधान स्टेज का ज्ञान देते हैं। जब से अपूर्ण आत्माओं द्वारा विज्ञान की खोज प्रारम्भ हुई है, तब से मनुष्य देवता से बन्दर बन गया है जिसको (Animal Nature) 'पाश्विक वृत्ति' कहा जाता है। परन्तु ''मानुष ते देवता किये करत न लागी वार''— यह महिमा केवल परमात्मा की है, विज्ञान की नहीं।

### विज्ञान चारित्रिक उन्नति करने में असमर्थ

विज्ञान ने मनुष्य को सर्वगुण-सम्पन्न, सोलह-कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण

निर्विकारी नहीं बनाया अपितु विकारी बनाया है। मनुष्यात्मा के चरित्र का निर्माण अथवा नैतिक उन्नति नहीं की है। यही कारण है कि जो चीज़ें सुख देने वाली हैं वही दु:खदायक हो जाती हैं। जो एटम बम रक्षा के साधन बनाये गये हैं, वो ही विनाश का कारण बन जायेंगे, जिन हवाई जहाजों में सैर करते हैं उसी हवाई जहाज से मृत्यु का भय बना रहता है।

आज लोग प्रकृति को विज्ञान की शक्ति से कण्ट्रोल करते हैं परन्तु फिर भी प्रकृति 'दासी' नहीं कहलाती। उदाहरण के तौर पर वे कहते हैं कि रावण ने अपनी चारपाई के चारों पायों के साथ जल, वायु, अग्नि, काल को बांधकर रखा था। क्या आज वही रावण युग नहीं? भाखड़ा नांगल डैम आपके पास है। जल को बांधा हुआ है। बटन दबाओ तो बिजली और पंखा चलने लगता है, हीटर जल जाता है और राकेट द्वारा थोड़े समय में चन्दमा तक भी पहुँच जाते हैं। प्रकृति के ये सब तत्व तो वश में किये हैं परन्तु प्रकृति दासी नहीं कहलाती जबकि देवताओं की प्रकृति दासी थी।

## सतयुग की उपलब्धियाँ

विज्ञान कोई बुरी वस्तु नहीं है परन्तु सतोगुणी आत्माएं न होने के कारण उनका सदुपयोग नहीं होता। सतयुग में भी साइन्स थी परन्तु साइन्स की खोज नहीं थी। स्वाभाविक रीति से सब सुविधायें थीं। वहाँ कोई तन का रोग नहीं था ताकि एक्सरे करने पड़े या दवाइयों का आविष्कार करना पड़े। किसी प्रकार का प्राकृतिक प्रकोप नहीं था। धन की भी कोई समस्या नहीं थी। पुष्पक विमान थे और हीरे-जड़ित महल भी थे। जैसे-जैसे मनुष्य की स्टेज बदलती गयी वैसे-वैसे भौतिक विज्ञान में उन्नति होती चली गयी और जीवन दु:खी व अशान्त होता

चला गया। जैसे साइन्स से सब चीज़ों का ढंग पता चलता है, उसी प्रकार से सृष्टि का भी पूरा चक्कर अथवा नियम परमात्मा बताते हैं। जैसे वैज्ञानिक लोगों के लिए परमात्मा को जानना जरूरी है क्योंकि वैज्ञानिक हर चीज को युक्ति-युक्त और तर्क-संगत रीति से जानना चाहता है, इसलिए परमात्मा को भी वैज्ञानिक-ढंग से जानना होगा।

मनुष्यों ने विज्ञान का अर्थ नास्तिकवाद ले लिया है परन्तु वास्तविक वैज्ञानिक कभी नास्तिक नहीं होते। उनको भी अन्दर सूक्ष्म बुद्धि में यह रहता कि कोई अज्ञात और सम्पूर्ण शक्ति है अवश्य, चाहे अहंकारवश वे उसे स्वीकार न करें। मुझे इस पर एक बात याद आती है कि एक बार एक वैज्ञानिक को कहा गया कि—'आप यह सिद्ध करके बताइये कि परमात्मा नहीं है।' उसने अपनी तार्किक युक्तियों के आधार पर यह सिद्ध करने का यत्न किया कि परमात्मा नहीं है। जब श्रोताओं ने उसकी बात को मान लिया कि परमात्मा नहीं है तो उसने कहा कि —''मैं परमात्मा का धन्यवादी हूँ कि यह सिद्ध हो गया है कि परमात्मा नहीं है।'' (Thank God that I have proved that there is no God)! देखा जाय कि अगर परमात्मा है ही नहीं और यह सिद्ध कर दिया तब फिर शुक्रिया किसका किया? परमात्मा कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे प्रयोगशाला में अन्य वस्तुओं की तरह प्रयोग, निरीक्षण, निष्कर्ष की प्रणाली से जान सकें। परमात्मा तो चेतन, अति सूक्ष्म ज्योति-बिन्दु है, जो ज्ञान का सागर, आनन्द का सागर, सर्वशक्तिवान और सबसे बड़े वैज्ञानिक हैं उनको ही सृष्टि का नियन्ता तथा सर्व सुखों का दाता कहा जाता है।

## परमात्मा का परिचय

परमात्मा को अंग्रेजी में 'God' कहते हैं। God (गॉड) में तीन

अक्षर हैं। इन तीनों अक्षरों से परमात्मा के कर्तव्य सिद्ध होते हैं जैसे 'जी' (G) Generator, 'ओ' (O) Operator, 'डी' (D) Destroyer, का वाचक है अर्थात् स्थापना, पालना, विनाश करने वाला होने के कारण ही परमात्मा का नाम 'God' है। परमपिता परमात्मा साकार प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा जो हमें ज्ञान देते हैं जिससे हम आत्माएं विदेही होती हैं और बुद्धि का योग परमात्मा से जोड़कर सब बातों का अनुभव करते हैं। ईश्वरीय या आध्यात्मिक ज्ञान-विज्ञान द्वारा स्वर्ग की स्थापना होती है। यदि हम निरे भौतिक-वैज्ञानिक रहे तो भौतिक विज्ञान हमें विनाश की ओर अवश्य ले ही जायेगा। अत: अब हमें नई दुनिया की स्थापना के संस्कार अपने में भरने हैं।

# धर्म और विज्ञान के बीच विषमता कैसे दूर हो?

हर युग की कोई-न-कोई विशेषता होती है और इस युग की भी अपनी विशेषता है। परन्तु इसकी मुख्य विशेषता है – **विभिन्नता** और **विषमता**। विचारों की विभिन्नता और विषमता इस युग की मुख्य विशेषता है। परन्तु यदि हम विचार करें तो इसका मूल है– अज्ञान अथवा अर्द्धज्ञान और अब आवश्यकता इस बात की है कि अज्ञान अथवा अर्द्धज्ञान को दूर करके हम मानव-मात्र को उस ज्ञान में लायें, उन विचारों में लायें जिनके द्वारा हम एकता ला सकें क्योंकि जब तक हम विचारों की विषमता और विभिन्नता दूर नहीं करते तब तक एकता नहीं आ सकती है और तब तक सृष्टि की समस्याएं कभी भी दूर नहीं हो सकतीं।

आज विषमता और विभिन्नता बहुत ही बढ़ चुकी है। हम आगे बढ़ते हैं किन्तु वहीं तक पहुँच जाते हैं जहाँ हम कहते हैं कि–आओ हम इस बारे में सहमत हों कि हममें मत-भेद है (Let us agree to disagree)। हम विषमता अर्थात् 'मत-भेद' शब्द को दूर नहीं करते और केवल इतना ही कहते हैं कि – आओ हम इस बारे में सहमत हो जायें कि हममें मत-भेद हैं अथवा हम 'सहिष्णुता' शब्द का प्रयोग कर एक-दूसरे के विचारों से सहमत न होते हुए भी मान्यता देना पसन्द करते हैं और यदि मान्यता न दी तो झगड़ा कर बैठते हैं।

### धर्म और विज्ञान एक-दूसरे के पूरक

इसी तरह आज 'धर्म' और 'विज्ञान'में भी विषमता आ गई है। परन्तु वास्तव में ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि हम सभी शरीरधारी आत्माएं भी हैं। न हम आत्मा को ही अलग

कर सकते हैं और न शरीर को ही क्योंकि अलग होने पर दोनों ही कुछ कर नहीं सकते हैं। निष्प्राण शरीर कुछ नहीं कर सकता है, इसी प्रकार, हमारे जीवन में भी धर्म और विज्ञान दोनों की आवश्यकता है।

### वर्तमान समय धर्म ने कौन-सा रूप लिया है?

धर्म हम मनुष्यात्माओं को कर्मक्षेत्र पर राह दिखाने वाला है। किन्तु आज उसमें मान्यतायें भी कुछ अजीब-सी हो गई हैं, जिसके कारण ही लोगों को उसके प्रति अरुचि हो गई है। अगर आज हम देखें तो धर्म के तीन भाग किये जा सकते हैं —(१) कर्मकाण्ड (२) कथानक (३) दर्शन। वस्तुत: धर्म का सम्बन्ध दर्शन से है, ज्ञान से है। उसका कोई भी सम्बन्ध कर्मकाण्ड और कथानक से नहीं है। चूँकि आज धर्म प्राय: कर्मकाण्ड और कथानक के रूप में है, इसलिए उनकी बातें भी हमें देनी ही पड़ती हैं। आज तो बात यहाँ तक पहुँच गयी है कि आधुनिक मानव धर्म के नाम पर कर्मकाण्ड और कथानक में पड़ गया है। दर्शन तो बहुत पीछे रह गया है।

अत: हमें उन दार्शनिक बातों पर विचार करना पड़ेगा। विज्ञान ने प्रकृति पर विजय पायी है किन्तु मानव फिर भी प्रकृति से पराजित है। आज विज्ञान ने बुद्धि-बल से ऐटम से शक्ति की उत्पत्ति कर दी है किन्तु मानव इस बात पर नियन्त्रण नहीं कर सका है कि वह उसका प्रयोग किस रीति से करे। मानव-प्रकृति पर, मानव संस्कारों पर विज्ञान का कोई नियन्त्रण नहीं है। दूसरी ओर आज धर्म में रुचि रखने वाला मानव, कर्म-काण्ड और कथानक तथा मूर्ति-पूजा तक ही अपने को सीमित रख कर चला आ रहा है। किन्तु वह यह नहीं समझता है कि हमारा अन्तिम लक्ष्य 'मुक्ति' है, जहाँ हम इस जन्म-मरण के चक्कर से छूट कर किसी अन्य लोक में वास करेंगे। किन्तु आज का वैज्ञानिक

इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं है और शायद सही रूप से तैयार नहीं है।

### धर्म और विज्ञान का समन्वय

विज्ञान ने हमें बहुत-सी चीज़ें दी हैं, दे रहा है और भविष्य में भी देगा, जो हमारे लिए सुख का साधन बन सकती है परन्तु साधन को भी लेने वाला कौन? — यह प्रश्न मुख्य है। जब तक हम इस बात पर ध्यान नहीं देंगे, तब तक हमें सुख मिल नहीं सकता है। विज्ञान ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया और न दे ही सकता है। आज भौतिक विज्ञान (Physics), और जीवन-दर्शन (Metaphysics) दोनों ही अलग-अलग विषय हो गये हैं। अभी हमें इन दोनों विषयों को मिलाना है क्योंकि हमारा दोनों से ही सम्बन्ध है। समन्वय के लिए हमें पहला पुरुषार्थ यह करना होगा कि दोनों ही विचार-धाराओं में जो त्रुटियाँ हैं, उन्हें निकालना होगा और यह हर्ष का विषय है कि ये संकीर्णतायें निकलती भी जा रही हैं। आज आप सृष्टि को गिरती हुई हालत में देख रहे हैं, कलह-क्लेश बढ़ता जा रहा है, मनोविकार की ओर मनुष्य की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। काम, क्रोधादि विकारों से मनुष्य अधिक ग्रसित होता जा रहा है और उतनी ही मनुष्य में प्यास बढ़ती जा रही है। अमरीका - जैसे सम्पन्न देश तथा पश्चिमी राष्ट्र भारत की ओर आँखें लगाये हुए हैं क्योंकि वे समझते हैं कि भारत की जो आध्यात्मिक प्रवृत्ति है वही सारी सृष्टि को उबार सकती है! तो अब आवश्यकता इस बात की है कि धर्म की मान्यतायें जो संकीर्ण धारा में आ चुकी हैं, उन्हें हम एक शुद्ध, सरल, जीवनोपयोगी रूप में जनता के सामने प्रस्तुत करें।

हम इस बात को लोगों को बतायें कि परमात्मा जो है जैसा है

और आत्मा भी जो है जैसी है, उसी रूप में हम प्राप्त कर सकते हैं परन्तु उसकी प्राप्ति ज्ञान से है जिसके द्वारा हम अपने कर्मों को एक दिशा दे सकते हैं। किसी ने राम को मान्यता दी है तो किसी ने कृष्ण को या किसी ने कुरान को। इसी प्रकार विज्ञान भी किसी मान्यता को सदा काल के लिए मान्यता नहीं देता है। वह जानता है कि मनुष्य गलती का एक पुतला है और ये सब सिद्धान्त मनुष्य के निकाले हुए हैं, इसलिए उनमें ग़लतियों की सम्भावना है।

आज कहीं अतिवृष्टि होती है तो कहीं अनावृष्टि। इसका कारण है कि प्रकृति भी अपना 'धर्म' छोड़ देती है और इसका मुख्य कारण यह है कि पहले मनुष्य अपना धर्म छोड़ देता है। लम्बे-चौड़े रूप में बहुत कठिन-कठिन श्लोकों के रूप में धर्म के सिद्धांतों को रखने की आवश्यकता नहीं है बल्कि आवश्यकता इसकी है कि तर्क-सम्मत और सहज करके लोगों के सामने धर्म को रखें, उन्हें आत्मा के विषय में बतायें। आज लोग कहते हैं कि बिना काम, क्रोधादि विकारों के सृष्टि कैसे चलेगी? ऐसा विचार आज के मानव के विकृत मस्तिष्क में आ गया है। यह उसकी भूल है: इस ही रूप में हमें धर्म को लोगों के सामने रखना होगा कि वे इन दूषित विचारों को निकाल दें।

हमें धर्म का स्वरूप आज इस रीति से रखना है कि वह हमारे आज के जीवन से सम्बन्धित हो। आज का मानव इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं है कि मृत्यु के पश्चात् अभी धार्मिक जीवन व्यतीत करने से भविष्य में हम लाभ—उठायेंगे वह प्रत्यक्ष फल देखना चाहता है। हमें उन्हें यह बात समझानी होगी कि पाँच विकार हमारे मूल गुण नहीं हैं बल्कि सभी धर्म की आत्मायें जो प्रेम, आनन्द, सुख और शान्ति चाहती हैं, वही हमारा 'मूल धर्म' है। अब हम धर्म का लोगों को ऐसा स्वरूप बतायेंगे कि आपको ऐसे चलना है, मिसाल के तौर

पर—सत्य बोलना है। उन्हें हमें यह भी बताना होगा कि सत्य बोलने के लिए शक्ति कैसे मिलती है। आज सभी कहते हैं कि झूठ मत बोलो, सत्य बोलो। यदि आप उनसे पूछेंगे कि आप सत्य क्यों नहीं बोलते हैं, तो वे कहेंगे कि हममें शक्ति नहीं है और आज के समाज को देखते हुए वे यह भी बात कहते हैं कि इसमें हमारा लाभ नहीं है। उन्हें ''सत्य बोलना अच्छा है''—इसके बदले यह समझना होगा कि सत्य बोलना आपके लिये लाभदायक है। सत्य बोलने से आप में शक्ति आ जायेगी। यदि हम इस प्रकार धर्म का ज्ञान देंगे और विज्ञान का धर्म से समन्वय करेंगे तो मानव-कल्याण होगा।

# समन्वय

वास्तव में 'धर्म' शब्द का अर्थ 'धारणा' अथवा स्वरूप है। अत: धर्म शब्द उस ज्ञान का वाचक है जो मनुष्य को स्वरूप में स्थित करने के योग्य बनाता है अथवा दिव्य गुणों की धारणा सिखाता है। इस प्रकार धर्म का क्षेत्र मनुष्य के आत्मा को उन्नत करना तथा उसके मन को शुद्ध करना है। दूसरी ओर विज्ञान मनुष्य को भौतिक जगत का सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक परिचय कराता है। धर्म मनुष्य की शान्ति के लिए आवश्यक है, उसका मानसिक सन्तुलन बनाये रखने के लिए सहायक है जबकि विज्ञान मनुष्य को प्रकृति के सुख उपलब्ध कराता है। इस प्रकार दोनों अपनी-अपनी जगह महत्वपूर्ण और उपयोगी हैं परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि विज्ञान पर धर्म का अंकुश होना ज़रूरी है वरना विज्ञान विध्वंसकारी बन सकता है। अब परमपिता परमात्मा उस शाश्वत धर्म की स्थापना कर रहे हैं जिससे आत्मा का परम उत्कर्ष हो सकता है। हमें चाहिए कि हम उससे पूर्ण लाभ लें।